इकाई 3 : मानवीय अनुभूतियाँ

पाठ :– 3.1 माटीवाली
पाठ :– 3.2 कन्यादान
पाठ :– 3.3 घीसा
पाठ :– 3.4 पुरस्कार

इ
का
ई

3 मानवीय अनुभूतियाँ

इस इकाई में मानव जीवन के अनुभव, मानवीय भावनाएँ जैसे प्रेम, करुणा त्याग, सहृदयता, सहानुभूति आदि से विद्यार्थियों को अनुभव कराने का प्रयास किया गया है। उम्मीद यह भी है कि इसमें शामिल साहित्य की विविध विधाएँ, मानवीय अनुभूतियों से उपजे मूल्यों, मूल्यों के संक्रमण, उनमें टकराव, अंतर्द्वंद्व जैसे भावबोधों को समझने, उन्हें महसूस करने को प्रोत्साहित करेंगी। जिससे इन मनोभावों से गुजरते हुए एक सहज– सरल व्यक्ति के रूप में विद्यार्थियों का विकास हो सके और इस प्रकार के साहित्य को पढ़ने, समझने, रचने और चुनाव करने के प्रति रुचियों का विकास कर पाएँ।

इकाई की पहली रचना 'माटीवाली' एक कहानी है। इस कहानी में विस्थापन की समस्या से उपजी पीड़ा व प्रताड़ना को प्रभावशाली तरीके से रखा गया है। जीवकोपार्जन के लिए घर–घर माटी पहुँचाने को विवश वृद्ध स्त्री गरीबी से संघर्ष करते हुए अपनी संवेदनशीलता का परिचय पूरी कहानी में देती ही है, गृहस्थी के बोध और बोझ को भी समझती है। पति की मृत्यु उस संघर्षशील वृद्ध स्त्री को उतना नहीं तोड़ती, जितना यह जवाब कि "बुढ़िया मुझे जमीन का कागज चाहिए रोजी का नहीं" और "बाँध बनने के बाद मैं खाऊँगी क्या साब।" पूरी कहानी में यह मार्मिकता अपने चरम रूप में दिखती है जो संवेदनशील मन को कचोटने वाली है, जब वह कर्मशील वृद्ध स्त्री यह कहती है "गरीब आदमी का श्मशान नहीं उजड़ना चाहिए।"

ऋतुराज की कविता 'कन्यादान" समाज में स्त्रियों के लिए नियत किए गए परम्परागत मान्यताओं के प्रति विरोध का स्वर उठाती है। इसमें एक माँ अपनी बेटी को यह बताती है कि स्त्रियों को सुन्दरता के आवरण और भुलावे में बाँध कर समाज उसकी कमजोरी का उपहास करता है और उपयोग भी। माँ अपने दीर्घ जीवन–अनुभवों

से संचित पीड़ा, उपेक्षा और उपयोग के आधार पर अपनी बेटी को आगाह करती है कि वह नए जीवन में प्रवेश करते हुए कोमलता से भ्रमित और कमजोर होने के बजाय जीवन के यथार्थ को समझे और मजबूती से उनका सामना कर पाए।

जयशंकर प्रसाद की प्रसिद्ध ऐतिहासिक कहानी 'पुरस्कार' उत्कृष्ट प्रेम को अभिव्यक्त करने वाली एक सशक्त रचना है। इसमें नायिका मधुलिका के माध्यम से नारी के प्रेम जनित अंतर्द्वंद, कर्तव्य और भावनाओं के टकराव और उत्कष्ट राष्ट्र–प्रेम को व्यक्त किया गया है। मधुलिका जहाँ एक ओर प्रेम की पूर्णता के लिए अपने प्रियतम अरुण के साथ अपने जीवन का भी बलिदान देने को प्रस्तुत हो जाती है वहीं दूसरी ओर राष्ट्र के प्रति अपने उत्कट प्रेम को वैयक्तिक प्रेम पर न्यौछावर कर देती है। यह भावना पाठक के मन पर अमिट प्रभाव छोड़ जाती है और पाठ को बार–बार पढ़ने व संदर्भ को समझने की अपेक्षा करती है।

छायावादी चतुष्टयी की प्रसिद्ध कवयित्री महादेवी के गद्य अपनी संवेदनशीलता और मार्मिकता के लिए प्रसिद्ध हैं। यहाँ प्रस्तुत 'घीसा' एक चर्चित रेखाचित्र है ,जिसमें महादेवी का एक संवेदनशील और सहज सा अध्यापकीय व्यक्तित्व उभर कर सामने आता है। इसमें वंचित समाज के पितृविहीन और कुपोषित शिष्य 'घीसा 'और गुरु 'महादेवी' के रागात्मक सबंधों के एहसास को देखा जा सकता है। घीसा के जीवन में सुधार और उमंग के भाव एक साथ दिखाई देते हैं, जो अल्पकालिक साबित होते हैं। पेड़ के नीचे लगनेवाली पाठशाला को लीपना, झाड़ना–बुहारना, गुरु जी के आने की राह तकना, खुद को साफ –सुथरा रखना, उनके आदेशों का समुचित निर्वहन, उन्हें भी कुछ देने की प्रबल इच्छा और साहस आदि ऐसे संदर्भ हैं जो संबंधों की भावविह्वलता की कहानी को जीवंत रूप में कहते हैं जिसे महादेवी इस रचना की शुरुआत में मार्मिक रूप में इस प्रकार रखती हैं –"वर्तमान की कौन सी अज्ञात प्रेरणा हमारे अतीत की किसी भूली हुई कथा को सम्पूर्ण मार्मिकता के साथ दोहरा जाती है, यह जान लेना सहज होता तो मैं भी आज गाँव के उस मलिन सहमें नन्हें से विद्यार्थी की सहसा याद आ जाने का कारण बता सकती, जो एक छोटी लहर के समान ही मेरे जीवन –तट को अपनी सारी आर्द्रता से छूकर अनंत जल राशि में विलीन हो गया।''

पाठ – 3.1

माटीवाली

विद्यासागर नौटियाल

जीवन परिचय

जाने माने साहित्यकार विद्यासागर नौटियाल का जन्म 20 सितम्बर 1933 में टिहरी के मालीदेवल गाँव में हुआ। 13 साल की उम्र में शहीद नागेन्द्र सकलानी से प्रभावित होकर सामंतवाद विरोधी प्रजामंडल से जुड़ गए। रियासत ने उन्हें टिहरी के आज़ाद होने तक जेल में रखा। वे वन आंदोलन, चिपको आंदोलन के साथ पहली कविता 'भैंस का कट्या' 1954 में इलाहाबाद से प्रकाशित होने वाली साहित्यिक पत्रिका कल्पना में प्रकाशित हुई। उन्होंने उपन्यासों, कहानियों के साथ 'मोहन गाता जाएगा' जैसा आत्मकथ्य भी लिखा। अब तक उनके छह उपन्यास और तीन कहानी संग्रह प्रकाशित हुए हैं। ''यमुना के बागी बेटे'' शीर्षक से आया उनका उपन्यास एक नये विषय के साथ गम्भीर प्रयोग है।

शहर के सेमल का तप्पड़ मोहल्ले की ओर बने आखिरी घर की खोली में पहुँचकर उसने दोनों हाथों की मदद से अपने सिर पर धरा बोझा नीचे उतारा। मिट्टी से भरा एक कंटर। माटी वाली। टिहरी शहर में शायद ऐसा कोई घर नहीं होगा जिसे वह न जानती हो या जहाँ उसे न जानते हों, घर के कुल निवासी, बरसों से वहाँ रहते आ रहे किराएदार, उनके बच्चे तलक। घर–घर में लाल मिट्टी देते रहने के उस काम को करने वाली वह अकेली है। उसका कोई प्रतिद्वंद्वी नहीं। उसके बगैर तो लगता है, टिहरी शहर के कई एक घरों में चूल्हों का जलना तक मुश्किल हो जाएगा। वह न रहे तो लोगों के सामने रसोई और भोजन कर लेने के बाद अपने चूल्हे–चौके की लिपाई करने की समस्या पैदा हो जाएगी। भोजन जुटाने और खाने की तरह रोज की एक समस्या। घर में साफ, लाल मिट्टी तो हर हालत में मौजूद रहनी चाहिए। चूल्हे–चौकों को लीपने के अलावा साल–दो साल में मकान के कमरे, दीवारों की गोबरी–लिपाई करने के लिए लाल माटी की जरूरत पड़ती रहती है। शहर से अन्दर कहीं माटाखान है नहीं। भागीरथी और भीलांगना, दो नदियों के तटों पर बसे हुए शहर की मिट्टी इस कदर रेतीली है कि उससे चूल्हों की लिपाई का काम नहीं किया जा सकता। आने वाले नए–नए किराएदार भी एक बार अपने घर के आँगन में उसे देख लेते हैं तो अपने आप माटी वाली के ग्राहक बन जाते हैं। घर–घर जाकर माटी बेचने वाली नाटे कद की एक बुढ़िया–माटीवाली।

शहरवासी सिर्फ माटी वाली को नहीं, उसके कंटर को भी अच्छी तरह पहचानते हैं। रद्दी कपड़े को मोड़कर बनाए गए एक गोल डिल्ले के ऊपर लाल, चिकनी मिट्टी से छुलबुल भरा कनस्तर टिका रहता है। उसके ऊपर

किसी ने कभी कोई ढक्कन लगा हुआ नहीं देखा। अपने कंटर को इस्तेमाल में लाने से पहले वह उसके ऊपरी ढक्कन को काटकर निकाल फेंकती है। ढक्कन के न रहने पर कंटर के अन्दर मिट्टी भरने और फिर उसे खाली करने में आसानी रहती है। उसके कंटर को जमीन पर रखते–रखते सामने के घर से नौ–दस साल की एक छोटी लड़की कामिनी दौड़ती हुई वहाँ पहुँची और उसके सामने खड़ी हो गई।

''मेरी माँ ने कहा है, जरा हमारे यहाँ भी आ जाना।''

''अभी आती हूँ।''

घर की मालकिन ने माटी वाली को अपने कंटर की माटी कच्चे आँगन के एक कोने पर उड़ेल देने को कह दिया।

''तू बहुत भाग्यवान है। चाय के टैम पर आई है हमारे घर। भाग्यवान आए खाते वक्त।''

वह अपनी रसोई में गई और दो रोटियाँ लेती आई। रोटियाँ उसे सौंपकर वह फिर अपनी रसोई में घुस गई।

माटी वाली के पास अपने अच्छे या बुरे भाग्य के बारे में ज्यादा सोचने का वक्त नहीं था। घर की मालकिन के अंदर जाते ही माटी वाली ने इधर–उधर तेज निगाहें दौड़ाई। हाँ, इस वक्त वह अकेली थी। उसे कोई देख नहीं रहा था। उसने .फौरन अपने सिर पर धरे डिल्ले के कपड़े के मोड़ों को हड़बड़ी में एक झटके में खोला और उसे सीधा कर दिया। फिर इकहरा खुल जाने के बाद वह एक पुरानी चादर के एक फटे हुए कपड़े के रूप में प्रकट हुआ।

मालकिन के बाहर आँगन में निकलने से पहले उसने चुपके से अपने हाथ में थामी दो रोटियों में से एक रोटी को मोड़ा और उसे कपड़े पर लपेटकर गाँठ बाँध दी। साथ ही अपना मुँह यों ही चलाकर खाने का दिखावा करने लगी। घर की मालकिन पीतल के एक गिलास में चाय लेकर लौटी। उसने वह गिलास बुढ़िया के पास जमीन पर रख दिया।

''ले, सद्दा–बासी, साग कुछ है नहीं अभी। इसी चाय के साथ निगल जा।''

माटी वाली ने खुले कपड़े के एक छोर से पूरी गोलाई में पकड़कर पीतल का वह गरम गिलास हाथ में उठा लिया। अपने होंठों से गिलास के किनारे को छुआने से पहले, शुरू–शुरू में उसने उसके अन्दर रखी गरम चाय को ठंडा करने के लिए सू–सू करके, उस पर लंबी–लंबी फूँकें मारीं। तब रोटी के टुकड़ों को चबाते हुए धीरे–धीरे चाय सुड़कने लगी।

''चाय तो बहुत अच्छा साग हो जाती है ठकुराइनजी।''

''भूख तो अपने में एक साग होती है बुढ़िया। भूख मीठी कि भोजन मीठा?''

''तुमने अभी तक पीतल के गिलास सँभालकर रखे हैं। पूरे बाजार में और किसी घर में अब नहीं मिल सकते ये गिलास।''

''इनके खरीदार कई बार हमारे घर के चक्कर काटकर लौट गए। पुरखों की गाढ़ी कमाई से हासिल की गई चीजों को हराम के भाव बेचने को मेरा दिल गवाही नहीं देता। हमें क्या मालूम कैसी तंगी के दिनों में अपनी जीभ पर कोई स्वादिष्ट, चटपटी चीज़ रखने के बजाय मन मसोसकर दो–दो पैसे जमा करते रहने के बाद खरीदी होंगी उन्होंने ये तमाम चीजें, जिनकी हमारे लोगों की नज़रों में अब कोई कीमत नहीं रह गई है। बाज़ार में जाकर पीतल का भाव पूछो ज़रा, दाम सुनकर दिमाग चकराने लगता है। और ये व्यापारी हमारे घरों से हराम के भाव इकट्ठा कर ले जाते हैं, तमाम बर्तन–भाँड़े। काँसे के बरतन भी गायब हो गए हैं, सब घरों से।''

''इतनी लंबी बात नहीं सोचते बाकी लोग। अब जिस घर में जाओं वहाँ या तो स्टील के भाँडे दिखाई देते हैं या फिर काँच और चीनी मिट्टी के।''

''अपनी चीज का मोह बहुत बुरा होता है। मैं तो सोचकर पागल हो जाती हूँ कि अब इस उमर में इस शहर को छोड़कर हम जाएँगे कहाँ।''

''ठकुराइन जी, जो जमीन–जायदादों के मालिक हैं, वे तो कहीं न कहीं ठिकाने पर जाएँगे ही। पर मैं सोचती हूँ मेरा क्या होगा! मेरी तरफ देखने वाला तो कोई भी नहीं।''

चाय खत्म कर माटी वाली ने एक हाथ में अपना कपड़ा उठाया, दूसरे में खाली कंटर और खोली से बाहर निकलकर सामने के घर में चली गई।

उस घर में भी 'कल हर हालत में मिट्टी ले आने' के आदेश के साथ उसे दो रोटियाँ मिल गई। उन्हें भी उसने अपने कपड़े के एक–दूसरे छोर में बाँध लिया। लोग जानें तो जानें कि वह ये रोटियाँ अपने बुड्ढे के लिए ले जा रही है। उसके घर पहुँचते ही अशक्त बुड्ढा कातर नज़रों से उसकी ओर देखने लगता है। वह घर में रसोई बनने का इंतजार करने लगता है। आज वह घर पहुँचते ही तीन रोटियाँ अपने बुड्ढे के हवाले कर देगी। रोटियों को देखते ही चेहरा खिल उठेगा बुड्ढे का।

साथ ही ऐसा ही बोल देगी, ''साग तो कुछ है नहीं अभी।''

और तब उसे जवाब सुनाई देगा, ''भूख मीठी कि भोजन मीठा ?''

उनका गाँव शहर के इतना पास भी नहीं हैं। कितना ही तेज चलो फिर भी घर पहुँचने में एक घंटा तो लग ही जाता है। रोज़ सुबह निकल जाती है वह अपने घर से। पूरा दिन माटाखान में मिट्टी खोदने, फिर विभिन्न स्थानों में फैले घरों तक उसे ढोने में बीत जाता है। घर पहुँचने से पहले रात घिरने लगती है। उसके पास अपना कोई खेत नहीं । जमीन का एक भी टुकड़ा नहीं। झोपड़ी, जिसमें वह गुजारा करती है, गाँव के एक ठाकुर की जमीन पर खड़ी है। उसकी जमीन पर रहने की एवज में उस भले आदमी के घर पर भी माटी वाली को कई तरह के कामों की बेगार करनी होती है।

नहीं, आज वह एक गठरी में बदल गए अपने बुड्ढे को कोरी रोटियाँ नहीं देगी। माटी बेचने से हुई आमदनी से उसने एक पाव प्याज़ खरीद लिया। प्याज़ को कूटकर वह उन्हें जल्दी–जल्दी तल लेगी। बुड्ढे को पहले रोटियाँ दिखाएगी ही नहीं। सब्जी तैयार होते ही परोस देगी उसके सामने दो रोटियाँ। अब वह दो रोटियाँ भी नहीं खा सकता। एक ही रोटी खा पाएगा या हद से हद डेढ़। अब उसे ज़्यादा नहीं पचता। बाकी बची डेढ़ रोटियों से माटी वाली अपना काम चला लेगी। एक रोटी तो उसके पेट में पहले ही जमा हो चुकी है। मन में यह सब सोचती, हिसाब लगाती हुई वह अपने घर पहुँच गई।

उसके बुड्ढे को अब रोटी की कोई ज़रूरत नहीं रह गई थी। माटीवाली के पाँवों की आहट सुन कर हमेशा की तरह आज वह चौंका नहीं। उसने अपनी नजरें उसकी ओर नहीं घुमाईं। घबराई हुई माटी वाली ने उसे छूकर देखा। वह अपनी माटी को छोड़कर जा चुका था।

टिहरी बाँध पुनर्वास के साहब ने उससे पूछा कि वह रहती कहाँ है?

''तुम तहसील से अपने घर का प्रमाणपत्र ले आना।''

''मेरी जिनगी तो इस शहर के तमाम घरों में माटी देते हुए गुज़र गई साब।''

''माटी कहाँ से लाती हो ?''

''माटाखान से लाती हूँ माटी।''

''वह माटाखान चढ़ी है तेरे नाम ? अगर है तो हम तेरा नाम लिख देते हैं।''

''माटाखान तो मेरी रोज़ी है साहब।''

''बुढ़िया हमें जमीन का कागज़ चाहिए, रोजी का नहीं।''

''बाँध बनने के बाद मैं क्या खाऊँगी साब ?''

''इस बात का फैसला तो हम नहीं कर सकते। वह बात तो तुझे खुद ही तय करनी पड़ेगी।''

टिहरी बाँध की दो सुरंगों को बंद कर दिया गया है। शहर में पानी भरने लगा है। शहर में आपाधापी मची है। शहरवासी अपने घरों को छोड़कर वहाँ से भागने लगे हैं। पानी भर जाने से सबसे पहले कुल श्मशान घाट डूब गए हैं।

माटी वाली अपनी झोपड़ी के बाहर बैठी है। गाँव के हर आने–जाने वाले से एक ही बात कहती जा रही है – ''गरीब आदमी का श्मशान नहीं उजड़ना चाहिए।''

शब्दार्थ

कंटर – कनस्तर; **डिल्ले** – सिर पर बोझा ढोने के लिए कपड़े से बनाई गई गद्दी; (गुँडरी) **माटाखान** – लिपाई–पुताई के लिए मिट्टी निकालने वाली जगह; **तंगी** – अभाव, गरीबी; **एवज** – बदले; **पुनर्वास** – पुनः बसाना; **अशक्त** – असहाय/कमजोर; **आपाधापी** – भागदौड़/हलचल; **बेगार** – बिना पैसों के काम करना।

अभ्यास

पाठ से

1. माटीवाली के बिना टिहरी शहर के कई घरों में चूल्हों तक का जलना क्यों मुश्किल हो जाता था?
2. माटीवाली का कंटर किस प्रकार का था?
3. माटीवाली का एक रोटी छिपा देना उसकी किस मनःस्थिति की ओर संकेत करता है?
4. घर की मालकिन ने पीतल के गिलासों को अभी तक संभालकर क्यों रखा था?
5. माटीवाली और मालकिन के संवाद में व्यापारियों की कौन सी प्रवृत्ति का उल्लेख किया गया था?
6. कहानी के अंत में लोग अपने घरों को छोड़कर क्यों जाने लगे थे?

पाठ से आगे

1. (क) बाँध, सड़क व अन्य सरकारी निर्माण कार्य होने पर स्थानीय लोगों को किस–किस तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है? चर्चा करके लिखिए।

   (ख) इस प्रकार के विकास कार्यों के क्या–क्या फायदे होते हैं? अपने विचार लिखिए।
2. पहले के जमाने में मिट्टी का उपयोग किन–किन कामों में होता था तथा वर्तमान समय में इसका उपयोग आप कहाँ–कहाँ देखते हैं ? अंतर बताते हुए लिखिए ।
3. बाँध बन जाने के बाद माटीवाली का शेष जीवन कैसे बीता होगा? कल्पना करके लिखिए।
4. माटीवाली की तरह और भी कई लोग हैं जिनके पास रहने के लिए अपनी जगह नहीं होती और न ही पेट भरने के लिए पर्याप्त भोजन। ऐसे लोगों के लिए सरकार को क्या–क्या उपाय करने चाहिए, शिक्षक से चर्चा करके लिखिए।
5. ऐसा क्यों होता जा रहा है कि आजकल पीतल, काँसे, एल्यूमिनियम के बर्तनों की बजाय घरों में ज्यादातर काँच, चीनी मिट्टी, मेलामाईन और प्लास्टिक से बने बर्तनों का इस्तेमाल होने लगा है? स्वास्थ्य, पर्यावरण एवं रोजगार आदि की दृष्टि से इसके नुकसान व फायदों पर अपने विचार लिखिए।
6. 'मृणशिल्प कला' अर्थात मिट्टी से कलाकृतियाँ बनाना

EPY68U

(क) आप अपने आसपास इस तरह की कलाकृतियाँ कहाँ–कहाँ देखते हैं? तथा ये भी पता कीजिए कि इस कला की क्या–क्या विशेषताएँ हैं?

(ख) आपके शहर, राज्य के कुछ ऐसे कलाकारों के नाम बताइए जिन्होंने मृणशिल्प कला के क्षेत्र में प्रदेश को पहचान दिलाई हो।

भाषा के बारे में

1. 'ई', 'इन' और 'आइन' प्रत्ययों का इस्तेमाल प्रायः स्त्रीलिंग शब्द बनाने के लिए किया जाता है। निम्न उदाहरणों को समझते हुए तालिका में निम्न प्रत्ययों से बने अन्य शब्द लिखिए–

EQ82AH

	'ई' प्रत्यय	'इन' प्रत्यय	'आइन' प्रत्यय
उदा0	लड़की	मालकिन	पंडिताइन

2. पाठ में आए निम्न मुहावरों के अर्थ लिखते हुए अपने वाक्यों में प्रयोग कीजिए–

(क) दिल गवाही नहीं देता।

(ख) मन मसोसकर रह जाना।

(ग) कातर नज़रों से देखना।

(घ) चेहरा खिल उठना।

(ङ) दिमाग चकराने लगना।

3. (क) निम्नांकित तीनों वाक्यों को ध्यान से पढ़िए–

(अ) मिट्टी से भरा एक कंटर।

(ब) उस काम को करनेवाली वह अकेली है।

(स) उसका प्रतिद्वन्द्वी कोई नहीं।

आप पाएँगे कि– इनके पढ़ने मात्र से ही इनका (प्रचलित) अर्थ आसानी से समझ में आता है।

इसे शब्द की अभिधा शक्ति के नाम से जाना जाता है।

(ख) नीचे दिए गए इन वाक्यों को भी पढ़िए–

(अ) भूख तो अपने में एक 'साग' होती है।

(ब) वह अपनी 'माटी' को छोड़कर जा चुका था।

(स) गरीब आदमी का 'श्मशान' नहीं उजड़ना चाहिए।

उपरोक्त तीनों वाक्यों में साग, माटी और श्मशान से तात्पर्य क्रमशः खाद्य सामग्री, पंचतत्व से बने शरीर और 'घर' से है।

इस प्रकार इन वाक्यों को पढ़कर उनके अर्थ पर यदि हम विचार करें तो पाते हैं कि वाक्य के वाच्यार्थ या मुख्यार्थ से भिन्न अन्य अर्थ (लक्ष्यार्थ) प्रकट होते हैं। इसे 'लक्षणा' शक्ति के नाम से जाना जाता है।

सहपाठियों के साथ बैठकर अभिधा और लक्षणा शक्ति के पाँच–पाँच वाक्यों को पाठ्यपुस्तक से ढूँढ़कर लिखिए एवं स्वयं भी रचना कीजिए।

योग्यता विस्तार

1. अपने आस–पास रहने वाले किसी ऐसे व्यक्ति अथवा कलाकार से मिलिए जो मिट्टी के बर्तन या मूर्तियाँ आदि बनाने का कार्य करता है। उससे साक्षात्कार करके निम्न बिन्दुओं के बारे में जानकारी प्राप्त कीजिए–

   - ये लोग कच्ची सामग्री कहाँ से जुटाते हैं?
   - कलाकृति/बर्तन बनाने से पूर्व मिट्टी तैयार करने की क्या प्रक्रिया अपनाते हैं?
   - एक कलाकृति तैयार करने की पूरी प्रक्रिया (बनाना, पकाना, रँगना इत्यादि) क्या–क्या होती है?
   - निर्मित सामग्री को वे कहाँ–कहाँ बेचते हैं?
   - इस व्यवसाय से प्राप्त आय, क्या उनके जीवन निर्वाह के लिए पर्याप्त है या नहीं?
   - उन्हें किस–किस प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है?

2. गंगा नदी को ''भागीरथी'' कहे जाने के पीछे जो प्रचलित पौराणिक कथा है, उसे अपने शिक्षक या बड़ों से जानने का प्रयास कीजिए और लिखिए।

EQGXC5

पाठ – 3.2

कन्यादान

EQQTDS

ऋतुराज

जीवन परिचय

ऋतुराज का जन्म सन् 1940 में भरतपुर में हुआ। राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर से उन्होंने अंग्रेजी में एम.ए. किया। उनकी अब तक आठ कविता संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। जिनमें 'एक मरणधर्मा और अन्य', 'पुल पर पानी', 'सुरत निरत' और 'लीला मुखारविंद' प्रमुख है। उन्हें सोमदत्त, परिमल सम्मान, मीरा पुरस्कार, पहल सम्मान तथा बिहारी पुरस्कार मिल चुके हैं। मुख्य धाराओं से अलग समाज के हाशिए के लोगों की चिंताओं को ऋतुराज ने अपने लेखन का मुख्य विषय बनाया है। उनकी कविताओं में दैनिक जीवन के अनुभवों का यथार्थ है और वे अपने आस–पास रोजमर्रा में घटित होने वाले सामाजिक शोषण और विडम्बनाओं पर निगाह डालते हैं। यही कारण है कि उनकी भाषा अपने परिवेश और लोक जीवन से जुड़ी हुई है।

कितना प्रामाणिक था उसका दुख
लड़की को दान में देते वक्त
जैसे वही उसकी अंतिम पूँजी हो।

लड़की अभी सयानी नहीं थी,
अभी इतनी भोली, सरल थी
कि उसे सुख का आभास तो होता था
लेकिन दुख बाँचना नहीं आता था।
पाठिका थी वह धुँधले प्रकाश की,
कुछ तुकों और कुछ लयबद्ध पंक्तियों की।

माँ ने कहा पानी में झाँककर
अपने चेहरे पर मत रीझना।
आग रोटियाँ सेंकने के लिए है,
जलने के लिए नहीं।

वस्त्र और आभूषण शाब्दिक भ्रमों की तरह
बंधन हैं स्त्री जीवन के।

माँ ने कहा लड़की होना
पर लड़की जैसी दिखाई मत देना।

शब्दार्थ

कन्यादान – कन्या का दान, **प्रामाणिक** – प्रमाण पर आधारित; **आभास** – लगना, महसूस होना; **लयबद्ध** – लय में बँधी हुई; **शाब्दिक** – शब्द से संबंधित; **रीझना** – मोहित होना।

अभ्यास

पाठ से

1. इस कविता में किसके–किसके मध्य संवाद हो रहा है?
2. लड़की को दान देते वक्त माँ को अंतिम पूँजी देने जैसा दुःख क्यों हो रहा है?
3. '' पानी में झाँककर कभी अपने चेहरे पर मत रीझना'' इस पंक्ति के माध्यम से माँ, बेटी को क्या सीख देना चाहती है?
4. कविता में माँ के अनुभवों की पीड़ा किन–किन पंक्तियों में उभरकर आई है?
5. ''लड़की होना पर लड़की जैसी दिखाई मत देना'' में किस–प्रकार के आदर्शों को छोड़ने और किन–किन आदर्शों को अपनाने की बात कही गई है?
6. ''पाठिका थी वह धुँधले प्रकाश की, कुछ तुकों और कुछ लयबद्ध पंक्तियों की'' से कवि का क्या अभिप्राय है?

पाठ से आगे

1. कविता में एक माँ द्वारा अपनी बेटी को जिस तरह की सीख दी गई है, वह वर्तमान में कितनी प्रासंगिक और औचित्यपूर्ण है? समूह में विचार–विमर्श कर लिखिए।
2. विवाह में कन्या के दान की परंपरा चली आ रही है। क्या वास्तव में 'कन्या' दान की वस्तु होती है? कक्षा में चर्चा कर प्राप्त विचार को लिखिए।

EQZPFF

3. कन्यादान के साथ ही वर पक्ष को धन, कीमती वस्तुएँ आदि भी भेंट स्वरूप दी जाती हैं, जिससे दहेज नामक सामाजिक बुराई को आश्रय मिलता है। इसकी वजह से कन्या के आत्मसम्मान को ठेस पहुँचती है साथ ही न केवल कन्या अपितु उसके माता–पिता को भी नाना तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कक्षा में उक्त समस्या पर सार्थक चर्चा का आयोजन कर उसका लेखन कीजिए।
4. 'महिलाओं को आदर्श छवि में बने रहने की परंपरागत हिदायत देना वास्तव में उन्हें कमजोर बनाए रखना होता है।' इस कथन के पक्ष–विपक्ष में अपने तर्क दीजिए।
6. स्वयं को सबल बनाने हेतु नारी को अपनी भूमिका में किस प्रकार के बदलाव की आवश्यकता है?
7. एक बेटे, भाई अथवा लड़की की स्वयं क्या भूमिका हो जिससे एक समाज में स्त्री के प्रति लोगों का स्वस्थ नजरिया हो।

भाषा के बारे में

1. समाज में विवाह से जुड़ी सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, उम्र, रंग–रूप आदि आधारों पर तमाम रुढ़िवादी भ्रांतियाँ एवं व्यवहार आज भी प्रचलन में हैं। इन्हीं मुद्दों को रेखांकित करते हुए एक आलेख तैयार कीजिए।
2. एक ऐसी कविता की रचना कीजिए जिसमें आपकी चाहत, महत्वाकांक्षा परिलक्षित (मुखरित) होती हो।
3. अपनी बड़ी बहन के विवाह की तैयारियों संबंधी जानकारी देते हुए अपनी सहेली/दोस्त को पत्र लिखिए।
4. मुख्यमंत्री कन्यादान योजना का लाभ उठाने हेतु मुख्यमंत्री कार्यालय को आवेदन पत्र लिखिए।

योग्यता विस्तार

1. बेटी–बचाओ, बेटी बढ़ाओ, 'नारी शिक्षा', कन्या–भ्रूण हत्या आदि विषयों पर चर्चा कर चार्ट पेपर पर लेखन कीजिए।
2. 'स्त्री सम्माननीया है' इस आशय के श्लोक, दोहे आदि को पुस्तकालय से ढूँढ़कर पढ़िए और किन्हीं पाँच का लेखन कीजिए।
3. स्त्री को सबला बनाने हेतु विचार संबंधी दस स्लोगन बनाइए एवं उनका लेखन कीजिए।
4. (क) विवाह में 'कन्यादान' की रस्म क्यों होती है? घर के बड़ों से पता करके लिखिए।
   (ख) क्या सभी समुदायों में विवाह की रस्में समान होती हैं? अपने उत्तर के पक्ष में दो अलग–अलग समुदाय से जुड़े लोगों से जानकारी प्राप्त कीजिए और उन रस्मों के बारे में लिखिए।

ERSCKD

पाठ – 3.3

घीसा

महादेवी वर्मा

जीवन परिचय

लेखिका और कवयित्री महादेवी वर्मा का जन्म सन् 1907 में उत्तर प्रदेश के फर्रूखाबाद में हुआ था। इन्होंने सन् 1932 में प्रयाग विश्वविद्यालय से संस्कृत में स्नातकोत्तर की डिग्री प्राप्त की। गद्य और पद्य दोनों पर ही इन्हें समानाधिकार प्राप्त था। गद्य साहित्य में संस्मरणों और रेखाचित्र लेखन को प्रारंभ करने का श्रेय इन्हें ही जाता है। इनके संस्मरणों में कोमल मानवीय भावनाओं और संवेदनाओं की अभिव्यक्ति बहुत ही हृदयस्पर्शी एवं मार्मिकता के साथ हुई है। उनके पात्र प्रायः अनाथ, स्नेह से वंचित, गरीब समाज द्वारा प्रताड़ित किंतु ईमानदार व्यक्ति अथवा पशु–पक्षी होते हैं। इन्होंने नारी की समस्याओं को भी बहुत प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया है। इनकी भाषा विशुद्ध साहित्यिक खड़ी बोली है, किन्तु आवश्यकतानुरूप देशज शब्दों का प्रयोग भी इनकी रचनाओं में देखा जा सकता है। 'नीहार', 'रश्मि', 'नीरजा', 'सांध्यगीत', 'यामा' तथा 'दीपशिखा' इनके काव्य संग्रह हैं। 'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएँ', 'श्रृंखला की कड़ियाँ', 'मेरा परिवार', 'पथ के साथी', 'क्षणदा' आदि इनकी गद्य रचनाएँ हैं। इनका गद्य साहित्य, समाज का जीता–जागता एलबम है।

इनकी रचना 'यामा' को मंगला प्रसाद पारितोषक तथा काव्य संकलन 'नीरजा' को सेक्सरिया पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इन्हें 'पद्म भूषण' अलंकार, 'भारतीय ज्ञानपीठ', 'साहित्य अकादमी' एवं 'भारत–भारती' पुरस्कारों से भी सम्मानित किया गया। इन्हें आधुनिक युग की मीरा की उपाधि प्रदान की गई है।

वर्तमान की कौन सी अज्ञात प्रेरणा हमारे अतीत की किसी भूली हुई कथा को सम्पूर्ण मार्मिकता के साथ दोहरा जाती है यह जान लेना सहज होता, तो मैं भी आज गाँव के उस मलिन, सहमे, नन्हें से विद्यार्थी की सहसा याद आ जाने का कारण बता सकती, जो एक छोटी लहर के समान ही मेरे जीवन तट को अपनी सारी आर्द्रता से छूकर अनंत जलराशि में विलीन हो गया है।

गंगा पार झूँसी के खंडहर और उसके आस–पास के गाँवों के प्रति मेरा जैसा अकारण आकर्षण रहा है, उसे देख कर ही संभवतः लोग जन्म–जन्मान्तर के संबंध का व्यंग्य करने लगे हैं। है भी तो आश्चर्य की बात !

जिस अवकाश के समय को लोग ईष्ट मित्रों से मिलने, उत्सवों में सम्मिलित होने तथा अन्य आमोद–प्रमोद के लिए सुरक्षित रखते हैं, उसी को मैं इस खंडहर और उसके क्षत–विक्षत चरणों पर पछाड़ें खाती हुई भागीरथी के तट पर काट ही नहीं, सुख से काट देती हूँ।

दूर–पास बसे हुए, गुड़ियों के बड़े–बड़े घरौंदों के समान लगने वाले कुछ लिपे–पुते, कुछ जीर्ण–शीर्ण घरों से स्त्रियों का झुण्ड पीतल–ताँबे के चमचमाते मिट्टी के नए लाल और पुराने भदरंग घड़े लेकर गंगाजल भरने आता है, उसे भी मैं पहचान गई हूँ। उनमें कोई बूटेदार लाल, कोई सफेद और कोई मैल और सूत में अद्वैत स्थापित करने वाली, कोई कुछ नई और कोई छेदों से चलनी बनी हुई धोती पहने रहती हैं। किसी की मोम लगी पाटियों के बीच में एक अंगुल चौड़ी सिंदूर रेखा अस्त होते हुए सूर्य की किरणों में चमकती रहती है और किसी के कड़वे तेल से भी अपरिचित रूखी जटा बनी हुई छोटी–छोटी लटें मुख को घेर कर उसकी उदासी को और अधिक केंद्रित कर देती है। किसी की साँवली गोल कलाई पर शहर की कच्ची नगदार चूड़ियों के नग रह–रहकर हीरे से चमक जाते हैं और किसी के दुर्बल काले पहुँचे पर लाख की पीली मैली चूड़ियाँ काले पत्थर पर मटमैले चंदन की मोटी लकीरें जान पड़ती हैं। कोई अपने गिलट के कड़े युक्त हाथ घड़े की ओट में छिपाने का प्रयत्न सा करती रहती है और कोई चाँदी के पछेली–ककना की झनकार के साथ ही बात करती है। किसी के कान में लाख की पैसे वाली तरकी धोती से कभी–कभी झाँक भर लेती है और किसी की ढारें लंबी जंजीर से गला और गाल एक करती रहती है। किसी के गुदना गुदे गेंहुए पैरों में चाँदी के कड़े सुडौलता की परिधि से लगते हैं और किसी की फैली उँगलियों और सफेद एड़ियों के साथ मिली हुई स्याही राँगे और काँसे के कड़ों को लोहे की साफ की हुई बेड़ियाँ बना देती हैं।

वे सब पहले हाथ–मुँह धोती हैं, फिर पानी में कुछ घुसकर घड़ा भर लेती हैं– तब घड़ा किनारे रख, सिर पर इंडुरी ठीक करती हुई मेरी ओर देखकर कभी मलिन, कभी उजली कभी दुःख की व्यथा–भरी, कभी सुख की कथा–भरी मुस्कान से मुस्करा देती हैं। अपने – मेरे बीच का अंतर उन्हें ज्ञात है, तभी कदाचित् वे इस मुस्कान के सेतु से उसका वार–पार जोड़ना नहीं भूलतीं।

ग्वालों के बालक अपनी चरती हुई गाय–भैंसों में से किसी को उस ओर बहकते देखकर ही लकुटी लेकर दौड़ पड़ते, गड़रियों के बच्चे अपने झुंड की एक भी बकरी या भेड़ को उस ओर बढ़ते देखकर कान पकड़कर खींच ले जाते हैं और व्यर्थ दिन भर गिल्ली–डंडा खेलनेवाले निठल्ले लड़के भी बीच–बीच में नजर बचाकर मेरा रुख देखना नहीं भूलते।

उस पार शहर में दूध बेचने जाते या लौटते हुए ग्वाले, किले में काम करने जाते या घर आते हुए मजदूर, नाँव बाँधते या खोलते हुए मल्लाह, कभी–कभी 'चुनरी त रंगाउस लाल मजीठी हो' गाते–गाते मुझ पर दृष्टि पड़ते ही अचकचा कर चुप हो जाते हैं। कुछ विशेष सभ्य होने का गर्व करने वालों को मुझे एक सलज्ज नमस्कार भी प्राप्त हो जाता है।

कह नहीं सकती, अब और कैसे मुझे उन बालकों को कुछ सिखाने का ध्यान आए पर जब बिना कार्यकारिणी के निर्वाचन के, बिना पदाधिकारियों के चुनाव के, बिना भवन के, बिना चंदे की अपील के और सारांश यह कि बिना किसी चिर–परिचित समारोह के, मेरे विद्यार्थी पीपल के पेड़ की घनी छाया में मेरे चारों ओर एक हो गए, तब मैं बड़ी कठिनाई से गुरु के उपयुक्त गंभीरता का भार वहन कर सकी।

और वे जिज्ञासु कैसे थे सो कैसे बताऊँ ! कुछ कानों में बालियाँ और हाथों में कड़े पहने, धुले कुरते और ऊँची धोती में नगर और ग्राम का सम्मिश्रण जान पड़ते थे, कुछ अपने बड़े भाई का पाँव तक लम्बा कुरता पहने खेत में डराने के लिए खड़े किए हुए नकली आदमी का स्मरण दिलाते थे, कुछ उभरी पसलियों, बड़े पेट और टेढ़ी दुर्बल टाँगों के कारण अनुमान से ही मनुष्य संतान की परिभाषा में आ सकते थे और कुछ अपने दुर्बल, रूखे और मलिन मुखों की करुण सौम्यता और निष्प्रभ पीली आँखों में संसार भर की उपेक्षा बटोर बैठे थे; पर घीसा उनमें अकेला ही रहा और आज भी मेरी स्मृति में अकेला ही आता है।

वह गोधूली मुझे अब तक नहीं भूली। संध्या के लाल सुनहली आभा वाले उड़ते हुए दुकूल पर रात्रि ने मानों छिपकर अंजन की मूठ चला दी थी। मेरा नाव वाला कुछ चिंतित सा लहरों की ओर देख रहा था ; बूढ़ी भक्तिन मेरी किताबें, कागज–कलम, आदि संभाल कर नाव पर रख कर बढ़ते अंधकार पर खिजलाकर बुदबुदा रही थी, या मुझे कुछ सनकी बनाने वाले विधाता पर, यह समझना कठिन था। बेचारी मेरे साथ रहते–रहते दस लंबे वर्ष काट आई है, नौकरानी से अपने आपको एक प्रकार की अभिभाविका मानने लगी है;

परंतु मेरी सनक का दुष्परिणाम सहने के अतिरिक्त उसे क्या मिला है ? सहसा ममता से मेरा मन भर आया परन्तु नाव की ओर बढ़ते हुए मेरे पैर, फैलते हुए अंधकार में से एक स्त्री–मूर्ति को अपनी ओर आता देख ठिठक गए। साँवले कुछ लंबे से मुखड़े में पतले स्याह ओठ कुछ अधिक स्पष्ट हो रहे थे। आँखें छोटी पर व्यथा से आर्द्र थीं। मलिन, बिना किनारी की गाढ़े की धोती ने उसके सलूका रहित अंगों को भलीभाँति ढँक लिया था; परंतु तब भी शरीर की सुडौलता का आभास मिल रहा था। कंधे पर हाथ रखकर वह जिस दुर्बल अर्धनग्न बालक को अपने पैरों से चिपकाए हुए थी, उसे मैंने संध्या के झुटपुटे में ठीक से नहीं देखा।

स्त्री ने रुक–रुककर कुछ शब्दों और कुछ संकेत में जो कहा, उससे मैं केवल यह समझ सकी कि उसके पति नहीं है, दूसरों के घर लीपने–पोतने का काम करने वह चली जाती है और उसका अकेला लड़का ऐसे ही घूमता रहता है। मैं इसे भी और बच्चों के साथ बैठने दिया करूँ, तो यह कुछ तो सीख सके।

दूसरे इतवार को मैंने उसे सबसे पीछे अकेले एक ओर दुबक कर बैठे हुए देखा। पक्का रंग, पर गठन में विशेष सुडौल, मलिन मुख जिसमें दो पीली, पर श्वेत आँखें जड़ी सी जान पड़ती थीं। कस कर बंद किए हुए पतले होठों की दृढ़ता और सिर पर खड़े हुए छोटे–छोटे रूखे बालों की उग्रता उसके मुख की संकोच भरी कोमलता से विद्रोह कर रही थी। उभरी हड्डियों वाली गर्दन को सँभाले हुए झुके कंधो से रक्तहीन मटमैली हथेलियों और टेढ़े–मेढ़े कटे हुए नाखूनों युक्त हाथों वाली पतली बाँहे ऐसी झूलती थीं, जैसे ड्रामा में विष्णु बनने वाले की दो नकली भुजाएँ। निरंतर दौड़ते रहने के कारण उस लचीले शरीर में दुबले पैर ही विशेष पुष्ट जान पड़ते थे। बस ऐसा ही था वह, न नाम में कवित्व की गुंजाइश, न शरीर में।

पर उसकी सचेत आँखों में न जाने कौन सी जिज्ञासा भरी थी। वे निरंतर घड़ी की तरह खुली मेरे मुख पर टिकी ही रहती थीं। मानो मेरी सारी विद्या बुद्धि को सीख लेना ही उनका ध्येय था।

लड़के उससे कुछ खिंचे–खिंचे से रहते थे। इसलिए नहीं कि वह कोरी था वरन् इसलिए कि किसी की माँ, किसी की नानी, किसी की बुआ आदि ने घीसा से दूर रहने की नितांत आवश्यकता उन्हें कान पकड़–पकड़ कर समझा दी थी। यह भी उन्होंने बताया और बताया घीसा के सबसे अधिक कुरूप नाम का रहस्य। बाप तो जन्म से पहले ही नहीं रहा घर में कोई देखने भालने वाला न होने के कारण माँ उसे बँदरिया के बच्चे के समान चिपकाए फिरती थी। उसे एक ओर लिटाकर जब वह मजदूरी के काम में लग जाती थी, तब पेट के बल घिसट–घिसटकर बालक संसार के प्रथम अनुभव के साथ–साथ इस नाम की योग्यता को भी सार्थक करता जाता था।

फिर धीरे–धीरे अन्य स्त्रियाँ भी मुझे आते–जाते रोककर अनेक प्रकार की भाव भंगिमा के साथ एक विचित्र सांकेतिक भाषा में घीसा की जन्मजात अयोग्यता का परिचय देने लगीं। क्रमशः मैंने उसके नाम के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं जाना।

उसका बाप बड़ा ही अभिमानी था और भला आदमी बनने का इच्छुक। डलिया आदि बुनने का काम छोड़कर वह थोड़ी बढ़ईगिरी सीख आया और केवल इतना ही नहीं, एक दिन चुपचाप दूसरे गाँव से युवती वधू लाकर उसने अपने गाँव की सब सजातीय सुंदरी बालिकाओं को उपेक्षित और उनके योग्य माता–पिता को निराश कर डाला। मनुष्य इतना अन्याय सह सकता है; परन्तु ऐसे अवसर पर भगवान् की असहिष्णुता प्रसिद्ध ही है। इसी से जब गाँव के चौखट किवाड़ बनाकर और ठाकुरों के घरों में सफेदी करके उसने कुछ ठाट–बाट से रहना आरंभ किया, तब अचानक हैजे के बहाने वह वहाँ बुला लिया गया, जहाँ न जाने का बहाना न उसकी बुद्धि सोच सकी, न अभिमान। पर स्त्री भी कम गर्वीली न निकली। बिना स्वर–ताल के आँसू गिराकर, बाल खोलकर, चूड़ियाँ फोड़कर और बिना किनारे की धोती पहनकर जब उसने बड़े घर की विधवा का स्वाँग भरना आरंभ किया, तब तो सारा समाज क्षोभ के समुद्र में डूबने उतराने लगा उस पर घीसा बाप के मरने के बाद हुआ है। हुआ तो वास्तव में छः महीने बाद, परन्तु उस समय के संबंध में क्या कहा जाए, जिसका कभी एक क्षण वर्ष बीतता है और कभी एक वर्ष क्षण हो जाता है। इसी से यदि वह छः मास का समय रबर की तरह खिंचकर एक साल की अवधि तक पहुँच गया, तो इसमें गाँव वालों का क्या दोष ?

यह कथा अनेक क्षेपकोमय विस्तार के साथ सुनाई तो गई थी मेरा मन फेरने के लिए और मन फिरा भी; परन्तु किसी सनातन नियम से कथावाचक की ओर न फिरकर कथा के नायकों की ओर फिर गया और इस प्रकार घीसा मेरे और अधिक निकट आ गया। वह अपना जीवन संबंधी अपवाद कदाचित् पूरा नहीं समझ पाया था; परंतु

अधूरे का भी प्रभाव उस पर कम न था, क्योंकि वह सब को अपनी छाया से इस प्रकार बचाता रहता था मानो उसे कोई छूत की बीमारी हो।

पढ़ने, उसे सबसे पहले समझने, उसे व्यवहार के समय स्मरण रखने, पुस्तक में एक भी धब्बा न लगाने, स्लेट को चमचमाती रखने और अपने छोटे से छोटे काम का उत्तरदायित्व बड़ी गंभीरता से निभाने में उसके समान कोई चतुर न था। इसी से कभी–कभी मन चाहता था कि उसकी माँ से उसे माँग ले जाऊँ और अपने पास रखकर उसके विकास की उचित व्यवस्था कर दूँ – परन्तु उस उपेक्षिता, पर मानिनी विधवा का वही एक सहारा था। वह अपने पति का स्थान छोड़ने पर प्रस्तुत न होगी, वह भी मेरा मन जानता था और उस बालक के बिना उसका जीवन कितना दुर्वह हो सकता है, यह भी मुझसे छिपा न था। फिर नौ साल के कर्तव्यपरायण घीसा की गुरुभक्ति देखकर उसकी मातृभक्ति के संबंध में कुछ संदेह करने का स्थान ही नहीं रह जाना था और इस तरह घीसा वहीं और उन्हीं कठोर परिस्थितियों में रहा, जहाँ क्रूरतम नियति ने केवल अपने मनोविनोद के लिए उसे रख दिया था।

शनिश्चर के दिन वह अपने छोटे दुर्बल हाथों से पीपल की छाया को गोबर–मिट्टी से पीला चिकनापन दे आता था। फिर इतवार को माँ के मजदूरी पर जाते ही एक मैले, फटे कपड़े में बँधी मोटी–रोटी और कुछ नमक या थोड़ा चबेना और डली गुड़ बगल में दबाकर पीपल की छाया को एक बार फिर झाड़ने बुहारने के पश्चात् वह गंगा के तट पर आ बैठता और अपनी पीली सतेज आँखों पर क्षीण साँवले हाथ की छाया कर दूर–दूर तक दृष्टि को दौड़ाता रहता जैसे ही उसे मेरी नीली सफेद नाव की झलक दिखाई पड़ती वैसे ही वह अपनी पतली टाँगों पर तीर के समान उड़ता और बिना नाम लिए हुए भी साथियों को सुनाने के लिए गुरु साहब कहता हुआ फिर पेड़ के नीचे पहुँच जाता था न जाने कितनी बार दुहराए–तिहराए हुए कार्यक्रम की एक अंतिम आवृत्ति आवश्यक हो उठती। पेड़ की नीची डाल पर रखी हुई मेरी शीतलपाटी उतार कर बार–बार झाड़–पोंछकर बिछाई जाती, कभी काम न आने वाली सूखी स्याही से काली कच्चे काँच की दवात, टूटे निब और उखड़े हुए रंग वाले भूरे, हरे कलम के साथ पेड़ के कोटर से निकालकर यथास्थान रख दी जाती और तब इस विचित्र पाठशाला का विचित्र मंत्री और निराला विद्यार्थी कुछ आगे बढ़कर मेरे सप्रणाम स्वागत के लिए प्रस्तुत हो जाता।

महीने में चार दिन ही मैं वहाँ पहुँच सकती थी और कभी–कभी काम की अधिकता से एक आधे छुट्टी का दिन और भी निकल जाता था; पर उस थोड़े से समय और इने–गिने दिनों में भी मुझे उस बालक के हृदय का जैसा परिचय मिला, वह चित्र के एल्बम के समान निरंतर नवीन सा लगता है।

मुझे आज भी वह दिन नहीं भूलता जब मैंने बिना कपड़ों का प्रबंध किए हुए ही उन बेचारों को सफाई का महत्व समझाते–समझाते थका डालने की मूर्खता की। दूसरे इतवार को सब जैसे–के–तैसे ही सामने थे– केवल कुछ गंगाजी में मुँह इस तरह धो आए थे कि मैल अनेक रेखाओं में विभक्त हो गया था, कुछ के हाथ पाँव ऐसे घिसे थे कि शेष मलिन शरीर के साथ वे अलग जोड़े हुए से लगते थे और कुछ 'न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी' की कहावत चरितार्थ करने के लिए कीट मैले फटे कुरते घर ही छोड़कर ऐसे अस्थिपंजरमय रुप में आ उपस्थित हुए थे, जिसमें उनके प्राण,'रहने का आश्चर्य है, पर घीसा गायब था। पूछने पर लड़के काना–फूसी करने का या एक साथ सभी उसकी अनुपस्थिति का कारण सुनाने को आतुर होने लगे। एक–एक शब्द जोड़–तोड़कर समझना पड़ा कि घीसा माँ से कपड़ा धोने के साबुन के लिए तभी से कह रहा था– माँ को मजदूरी के पैसे मिले नहीं और दुकानदार ने अनाज लेकर साबुन दिया नहीं। कल रात को माँ को पैसे मिले और आज सवेरे वह सब काम छोड़कर पहले साबुन लेने गई। अभी लौटी है, अतः घीसा कपड़े धो रहा है, क्योंकि गुरु साहब ने कहा था कि नहा–धोकर

साफ कपड़े पहनकर आना। और अभागे के पास कपड़े ही क्या थे किसी दयावती का दिया हुआ एक पुराना कुरता जिसकी एक आस्तीन आधी थी और एक अँगोछा जैसा फटा टुकड़ा। जब घीसा नहाकर गीला अँगोछा लपेटे और आधा भीगा कुरता पहने अपराधी के समान मेरे सामने आ खड़ा हुआ तब आँखें ही नहीं मेरा रोम–रोम गीला हो गया। उस समय समझ में आए कि द्रोणाचार्य ने अपने भील शिष्य से अँगूठा कैसे कटवा लिया था। एक दिन न जाने क्या सोच कर मैं उन विद्यार्थियों के लिए 5–6 सेर जलेबियाँ ले गई; पर कुछ तोलने वाले की सफाई से, कुछ तुलवाने वाले की समझदारी से और कुछ वहाँ की छीना–झपटी के कारण प्रत्येक को पाँच से अधिक न मिल सकीं। एक कहता था– मुझे एक कम मिली; दूसरे ने बताया मेरी अमुक ने छीन ली। तीसरे को घर में सोते हुए छोटे भाई के लिए चाहिए, चौथे को किसी और की याद आ गई। पर इस कोलाहल में अपने हिस्से की जलेबियाँ लेकर घीसा कहाँ खिसक गया, यह कोई नहीं जान सका। एक नटखट अपने साथी से कह रहा था '' सार एक ठो पिलवा पाले हैं, ओही का देय बरे गा होई'' पर मेरी दृष्टि से संकुचित होकर चुप रह गया और तब तक घीसा लौटा ही। उसका सब हिसाब ठीक था– जलखई वाले छन्ने में दो जलेबियाँ लपेटकर वह माई के लिए छप्पर में खोंस आया है, एक उसने अपने पाले हुए, बिना माँ के कुत्ते के पिल्ले को खिला दी और दो स्वयं खा लीं। 'और चाहिए' पूछने पर उसकी संकोच भरी आँखें झुक गईं–ओठ कुछ हिले। पता चला कि पिल्ले को उससे कम मिली है। दें तो गुरु साहब पिल्ले को ही एक और दे दें।

और होली के पहले की एक घटना तो मेरी स्मृति में ऐसे गहरे रंगों से अंकित है जिसका भूल सकना सहज नहीं। उन दिनों हिन्दू–मुस्लिम वैमनस्य धीरे–धीरे बढ़ रहा था और किसी दिन उसके चरम सीमा तक पहुँच जाने की पूर्ण संभावना थी। घीसा दो सप्ताह से ज्वर से पड़ा था– दवा मैं भिजवा देती थी; परन्तु देख–भाल का कोई ठीक प्रबंध न हो पाता था। दो–चार दिन उसकी माँ स्वयं बैठी रही। फिर एक अंधी बुढ़िया को बैठा कर काम पर जाने लगी।

इतवार की साँझ को मैं बच्चों को विदा दे, घीसा को देखने चली; परन्तु पीपल के पचास पग दूर पहुँचते–पहुँचते उसी को डगमगाते पैरों से गिरते–पड़ते अपनी ओर आते देख मेरा मन उद्विग्न हो उठा। वह तो इधर पन्द्रह दिन से उठा ही नहीं था; अतः मुझे उसके सन्निपातग्रस्त होने का ही संदेह हुआ। उसके सूखे शरीर में विद्युत सी दौड़ रही थी, आँखें और भी सतेज और मुख ऐसा था, जैसे हल्की आँच में धीरे–धीरे लाल होने वाला लोहे का टुकड़ा।

पर उसके वात–ग्रस्त होने से भी अधिक चिंताजनक उसकी समझदारी की कहानी निकली। वह प्यास से जाग गया था; पर पानी पास मिला नहीं और मनिया की अंधी आजी से माँगना ठीक न समझकर वह चुपचाप कष्ट सहने लगा। इतने में मुल्लू के कक्का ने पास से लौटकर दरवाजे से ही अंधी को बताया कि शहर में दंगा हो रहा है और तब उसे गुरु साहब का ध्यान आया। मुल्लू के कक्का के हटते ही वह ऐसे हौले–हौले उठा कि बुढ़िया को पता ही न चला और कभी दीवार, कभी पेड़ का सहारा लेता–लेता इस ओर भागा। अब वह गुरु साहब के गोड़ धर कर यहीं पड़ा रहेगा; पर पार किसी तरह भी न जाने देगा।

तब मेरी समस्या और भी जटिल हो गई। पार तो मुझे पहुँचाना था ही; पर साथ ही बीमार घीसा को ऐसे समझा कर, जिससे उसकी स्थिति और गंभीर न हो जाए। पर सदा के संकोची, नम्र, और आज्ञाकारी घीसा का इस दृढ़ और हठी बालक में पता ही न चलता था। उसने पारसाल ऐसे ही अवसर पर हताहत दो मल्लाह देखे थे और कदाचित् इस समय उसका रोग से विकृत मस्तिष्क उन चित्रों में गहरा रंग भरकर मेरी उलझन को और

उलझा रहा था। पर उसे समझाने का प्रयत्न करते–करते अचानक ही मैने एक ऐसा तार छू दिया, जिसका स्वर मेरे लिए भी नया था। यह सुनते ही कि मेरे पास रेल में बैठकर दूर–दूर से आए हुए बहुत से विद्यार्थी हैं जो अपनी माँ के पास साल भर में एक बार ही पहुँच पाते हैं और जो मेरे न जाने से अकेले घबरा जाएँगे, घीसा का सारा हठ, सारा विरोध ऐसे बह गया जैसे वह कभी था ही नहीं। और तब घीसा के सामने समान तर्क की क्षमता किसमें थी। जो साँझ को अपनी माई के पास नहीं जा सकते, उनके पास गुरु साहब को जाना ही चाहिए। घीसा रोकेगा, तो उसके भगवान् जी गुस्सा हो जाएँगे, क्योंकि वे ही तो घीसा को अकेला बेकार घूमता देखकर गुरु साहब को भेज देते हैं आदि–आदि, उसके तर्कों का स्मरण कर आज भी मन भर आता है। परन्तु उस दिन मुझे आपत्ति से बचाने के लिए अपने बुखार से जलते हुए अशक्त शरीर को घसीट लाने वाले घीसा को जब उसकी टूटी खटिया पर लिटाकर मैं लौटी, तब मेरे मन में कौतुहल की मात्रा ही अधिक थी।

इसके उपरांत घीसा अच्छा हो गया और धूल और सूखी पत्तियों को बाँधकर उन्मत्त के समान घूमने वाली गर्मी की हवा से उसका रोज संग्राम छिड़ने लगा–झाड़ते–झाड़ते ही वह पाठशाला धूल–धूसरित होकर भूरे, पीले और कुछ हरे पत्तों की चार में छिप कर तथा कंकालशेषी शाखाओं में उलझते, सूखे पत्तों को पुकारते वायु की संतप्त सरसर से मुखरित होकर उस भ्रांत बालक को चिढ़ाने लगती। तब मैंने तीसरे पहर से संध्या समय तक वहाँ रहने का निश्चय किया; परन्तु पता चला, घीसा किसकिसाती आँखों को मलता और पुस्तक से बार–बार धूल झाड़ता हुआ दिन भर वहीं पेड़ के नीचे बैठा रहता है मानो वह किसी प्राचीन युग का तपोव्रती अनागरिक ब्रह्मचारी हो, जिसकी तपस्या भंग के लिए ही लू के झोंके आते हैं।

इस प्रकार चलते–चलते समय ने जब दाई छूने के लिए दौड़ते हुए बालक के समान झपटकर उस दिन पर उँगली धर दी, जब मुझे उन लोगों को छोड़ देना था, तब तो मेरा मन बहुत ही अस्थिर हो उठा। कुछ बालक उदास थे और कुछ खेलने की छुट्टी से प्रसन्न ! कुछ जानना चाहते थे कि छुट्टियों के दिन चूने की टिपकियाँ रखकर गिने जाएँ, या कोयले की लकीरें खींचकर। कुछ के सामने बरसात में चूते हुए घर में आठ पृष्ठ की पुस्तक बचा रखने का प्रश्न था और कुछ कागजों पर चूहे के आक्रमण की ही समस्या का समाधान चाहते थे। ऐसे महत्वपूर्ण कोलाहल में घीसा न जाने कैसे अपना रहना अनावश्यक समझ लेता था, अतः सदा के समान आज भी मैं उसे न ,खोज पाई। जब मैं कुछ चिंतित–सी वहाँ से चली, तब मन भारी–भारी हो रहा था, आँखों में कोहरा सा घिर–घिर आता था। वास्तव में उन दिनों डाक्टरों को मेरे पेट में फोड़ा होने का संदेह हो रहा था– ऑपरेशन की संभावना थी। कब लौटूँगी या नहीं लौटूँगी, यही सोचते–सोचते मैंने फिर कर चारों ओर जो आर्द्र दृष्टि डाली वह कुछ समय तक उन परिचित स्थानों से भेंट कर वहीं उलझ रही।

पृथ्वी के उच्छ्वास के समान उठते हुए धुँधलेपन में वे कच्चे घर आकंठ मग्न हो गए थे – केवल फूस के मटमैले और खपरैले के कत्थई और काले छप्पर वर्षा में बढ़ी गंगा के मिट्टी जैसे जल में पुरानी नावों के समान जान पड़ते थे। कछार की बालू में दूर तक फैले तरबूज और खरबूज के खेत अपने सिरकी और फूस के टट्टियों, और रखवाली के लिए बनी पर्णकुटियों के कारण जल में बसे किसी आदिम द्वीप का स्मरण दिलाते थे। उनमें एक–दो दिए जल चुके थे, तब मैंने दूर पर एक छोटा–सा काला धब्बा आगे बढ़ता देखा। वह घीसा ही होगा। यह मैंने दूर से ही जान लिया। आज गुरु साहब को उसे बिदा देना है, यह उसका नन्हा हृदय अपनी पूरी संवेदना शक्ति से जान रहा था, इसमें संदेह नहीं था। परन्तु उस उपेक्षित बालक के मन में मेरे लिए कितनी सरल ममता और मेरे विछोह की कितनी गहरी व्यथा हो सकती है, यह जानना मेरे लिए शेष था।

निकट आने पर देखा कि उस धूमिल गोधूली में बादामी कागज पर काले चित्र के समान लगने वाला नंगे बदन घीसा एक बड़ा तरबूज दोनों हाथों में सम्हाले था, जिसमें बीच के कटे भाग में से भीतर की ईषत–लक्ष्य ललाई चारों ओर के गहरे हरेपन में कुछ खिले कुछ बंद गुलाबी फूल–जैसी जान पड़ती थी।

घीसा के पास न पैसा था न खेत– तब क्या वह इसे चुरा लाया है! मन का संदेह बाहर आया ही और तब मैंने जाना कि जीवन का खरा सोना छिपाने के लिए उस मलिन शरीर को बनाने वाला ईश्वर उस बूढ़े आदमी से भिन्न नहीं, जो अपनी सोने की मोहर को कच्ची मिट्टी की दीवार में रखकर निश्चिंत हो जाता है। घीसा गुरु साहब से झूठ बोलना भगवान जी से झूठ बोलना समझता है। वह तरबूज कई दिन पहले देख आया था। माई के लौटने में जाने क्यों देर हो गई, तब उसे अकेले ही खेत पर जाना पड़ा। वहाँ खेतवाले का लड़का था, जिसकी उसके नए कुरते पर बहुत दिन से नजर थी। प्रायः सुना–सुना कर कहता रहता था कि जिनकी भूख जूठी पत्तल से बुझ सकती है, उनके लिए परोसा लगाने वाले पागल होते हैं। उसने कहा– पैसा नहीं है, तो कुरता दे जाओ। और घीसा आज तरबूज न लेता, तो कल उसका क्या करता। इससे कुरता दे आया; पर गुरु साहब को चिंता करने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि गर्मी में वह कुरता पहनता ही नहीं और जाने–आने के लिए पुराना ठीक रहेगा। तरबूज सफेद न हो, इसलिए कटवाना पड़ा– मीठा है या नहीं यह देखने के लिए उँगली से कुछ निकाल भी लेना पड़ा।

गुरु साहब न लें, तो घीसा रात भर रोएगा– छुट्टी भर रोएगा। ले जाएँ तो वह रोज नहा–धोकर पेड़ के नीचे पढ़ा हुआ पाठ दोहराता रहेगा और छुट्टी के बाद पूरी किताब पट्टी पर लिखकर दिखा सकेगा।

और तब अपने स्नेह में प्रगल्भ उस बालक के सिर पर हाथ रखकर मैं भावातिरेक से ही निश्चल हो रही। उस तट पर किसी गुरु को किसी शिष्य से कभी ऐसी दक्षिणा मिली होगी, ऐसा मुझे विश्वास नहीं; परन्तु उस दक्षिणा के सामने संसार के अब तक सारे आदान–प्रदान फीके जान पड़े।

फिर घीसा के सुख का विशेष प्रबंध कर मैं बाहर चली गई और लौटते–लौटते कई महीने लग गए। इस बीच में उसका कोई समाचार न मिलना ही संभव था। जब फिर उस ओर जाने का मुझे अवकाश मिल सका, तब घीसा को उसके भगवानजी ने सदा के लिए पढ़ने से अवकाश दे दिया था– आज वह कहानी दोहराने की मुझ में शक्ति नहीं है; पर संभव है आज के कल, कल के कुछ दिन, दिनों के मास और मास के वर्ष बन जाने पर मैं दार्शनिक के समान धीर–भाव से उस छोटे जीवन का उपेक्षित अंत बता सकूँगी। अभी मेरे लिए इतना ही पर्याप्त हैं कि मैं अन्य मलिन मुखों में उसकी छाया ढूँढती रहूँ।

शब्दार्थ

क्षत–विक्षत – कटा–फटा; **अद्वैत** – एकाधिक ना होना; **असहिष्णुता** – सहनशीलता का अभाव; **क्षेपक** – मूलबात में अपनी बात जोड़ते हुए कहना, **नियति** विधान या होनी; **शीतलपाटी** – एक प्रकार के घास से बनी चटाई; **जैसे के तैसे** – यथावत; **सन्निपातग्रस्त** – लकवाग्रस्त; **प्रगल्भ** – वाचाल; **भावातिरेक** – भावनाओं की अधिकता; **दुर्वह** – कठिन; **हताहत** – घायल; **ईषत लक्ष्य** – अभीष्ट अथवा लक्ष्य। **इंडुरी** = गुडरी (घड़े को स्थिर रखने के लिए सिर पर गोल रखा गया कपड़ा)

अभ्यास

पाठ से

1. पहली बार जब घीसा कक्षा में आया तब वह कैसा दिखाई पड़ता था? अपने शब्दों में वर्णन कीजिए।
2. घीसा का नाम घीसा कैसे पड़ा?
3. घीसा कक्षा लगने के पूर्व क्या तैयारी करता था?
4. बच्चे साफ–सफाई का पाठ पढ़ने के बाद अगली कक्षा में किस–प्रकार तैयार होकर आए थे?
5. घीसा को देखकर ''आँखें ही नहीं मेरा रोम–रोम गीला हो गया'' लेखिका ने ऐसा क्यों कहा?
6. लेखिका ने ईश्वर की तुलना बूढ़े आदमी से क्यों की है?
7. महादेवी वर्मा अक्सर अपनी छुट्टियाँ कैसे बिताया करती थीं?
8. भक्तिन कौन थी? महादेवी वर्मा को ऐसा क्यों लगता था कि वो (भक्तिन) अपने आपको उनकी अभिभाविका मानने लगी थी?
9. घीसा ने अंत में गुरु साहिबा को क्या भेंट दी? यह भेंट सामग्री उसने कैसे जुटाई?
10. महादेवी वर्मा को अन्य विद्यार्थियों की अपेक्षा घीसा ही क्यों याद रहा?

पाठ से आगे

1. ''संध्या के लाल सुनहली आभा वाले उड़ते हुए दुकूल पर रात्रि ने मानो छिपकर अंजन की मूठ चला दी थी।'' इस पंक्ति में प्रकृति के जिस दृश्य का वर्णन किया गया है उसे अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए।
2. ''यह कथा अनेक क्षेपकोमय विस्तार के साथ सुनाई तो गई थी मेरा मन फेरने के लिए, और मन फिरा भी; परन्तु किसी सनातन नियम से कथावाचक की ओर न फिरकर कथा के नायकों की ओर फिर गया और इस प्रकार घीसा मेरे और अधिक निकट आ गया।'' उपरोक्त पंक्तियों में लोगों की किस मनोवृत्ति व लेखिका के किस व्यक्तित्व की ओर संकेत किया गया है?
3. अन्य बच्चों की माँ, बुआएँ तथा दादी–नानी उन्हें घीसा से दूर रहने की हिदायत क्यों देती थी? आज के संदर्भ में क्या ऐसा व्यवहार करना उचित है ? अपने विचार लिखिए।
4. गर्मी की छुट्टियाँ लगने पर प्रायः सबके मन में खुशी और दुःख के मिले–जुले भाव होते हैं, छुट्टियाँ होने पर आप एवं आपके साथी कैसा महसूस करते हैं? आपस में बातचीत करके लिखें।
5. निम्नांकित पंक्तियों में निहित भाव को स्पष्ट करें–

ES28M1

(क) ''तब मैंने जाना कि जीवन का खरा सोना छिपाने के लिए उस मलिन शरीर को बनाने वाला ईश्वर उस बूढ़े आदमी से भिन्न नहीं, जो अपने सोने की मोहर को कच्ची मिट्टी की दीवार में रखकर निश्चिंत हो जाता है।''

(ख) ''जिनकी भूख जूठी पत्तल से बुझ सकती है, उनके लिए परोसा लगाने वाले पागल होते हैं।''

6. पाठ के आरंभ में पानी भरती महिलाओं का चित्रण और घीसा की देहयष्टि का इस प्रकार वर्णन किया गया है कि हमारे मन मस्तिष्क में तस्वीर साकार हो जाती है। लेखन शैली में इस विधा को रेखाचित्र के नाम से जाना जाता है।

आप भी अपने सूक्ष्म अवलोकन के आधार पर किसी व्यक्ति, वस्तु अथवा दृश्य का चित्रण एक अनुच्छेद में कीजिए।

भाषा के बारे में

1. हमारे शरीर के विविध अंगों के नाम का प्रयोग, कुछ का स्त्रीलिंग में तो कुछ का पुल्लिंग में होता है यथा सिर, गला, हाथ आदि पुल्लिंग होते हैं तो आँखें, नाक, मूँछ स्त्रीलिंग में होती हैं। शरीर के सभी अंगों का निम्नांकित सारणी के अनुसार शिक्षक की मदद से वाक्यों में प्रयोग करते हुए उनके लिंगों का निर्धारण कीजिए इसमें आप अपने सहपाठियों या शिक्षक की भी मदद ले सकते हैं।

अंगों का नाम	लिंग	वाक्य

2. महादेवी जी ने घीसा नामक इस रेखाचित्र के वर्णन में विशेषण–विशेष्यों का बहुतायत से प्रयोग किया है। कक्षा में समूह में बँटकर पाठ के अलग–अलग हिस्सों/अनुच्छेदों में आए विशेषण एवं विशेष्यों की सूची तैयार कीजिए। उन विशेषणों को अन्य उपयुक्त विशेष्यों के साथ भी जोड़ने का प्रयास कीजिए।

3. वाक्य संरचना करते समय यदि वाक्य में कर्त्ता के साथ 'ने' विभक्ति हो परन्तु कर्म के साथ 'को' विभक्ति न हो तो क्रिया, कर्म के अनुसार होगी। यथा– मैंने पुस्तक पढ़ी। मोहन ने रोटी खाई। सीता ने बताशा खाया। मीरा ने फल खाए।

इस पाठ में भी ऐसे प्रयोग कई स्थल पर देखे जा सकते हैं, जैसे– दुकानदार ने अनाज लेकर साबुन दिया नहीं। सदा के समान आज भी मैं उसे न खोज पाया। रात्रि ने मानो छिपकर अंजन की मूठ चला दी थी। मैंने फिरकर चारों ओर जो आर्द्र दृष्टि डाली। आप भी इस प्रकार के कुछ और वाक्यों का निर्माण कीजिए।

योग्यता विस्तार

1. गुरु दक्षिणा की परंपरा आज प्रचलन में नहीं है किन्तु इससे संबंधित बहुत सारी कहानियाँ प्रचलित हैं जैसे एकलव्य की कथा, आरुणि की कथा आदि। अपने बड़ों से उन्हें सुनिए और लिखिए।

2. ''घीसा'' की ही तरह महादेवी जी द्वारा लिखित अन्य रेखाचित्र यथा भक्तिन, सोना, गिल्लू रामा आदि को भी पुस्तकालय से लेकर पढ़िए।

पाठ – 3.4

पुरस्कार

जयशंकर प्रसाद

जीवन परिचय

छायावाद के जन्मदाता एवं आधार स्तंभ श्री जयशंकर प्रसाद जी का जन्म संवत् 1946 अर्थात् सन् 1889 ईसवीं को काशी में हुआ था। उनमें काव्य रचना की प्रतिभा जन्मजात थी। वे बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार थे जिनका प्रमाण विविध–विधाओं में सृजित उनकी साहित्यिक रचनाएँ हैं। वे हिन्दी के प्रसिद्ध गीतकार भी थे। उनकी रचनाओं का मुख्य विषय प्रेम एवं आनंद रहा है, साथ ही प्रकृति चित्रण उनकी रचनाओं की महत्वपूर्ण विशेषता है। तत्सम शब्दों की बहुलता उनकी भाषा में देखी जा सकती है। प्रतीकात्मकता तथा बिंब विधान उनकी शैली की विशिष्टता है। छोटे–छोटे वाक्यों में गंभीर भाव भरना, उनमें संगीत और लय का विधान करना उनकी शैली को सरस, स्वाभाविक, प्रभावपूर्ण, ओजमयी और चुटीली बना है।

'कामायनी', 'आँसू', 'झरना', 'लहर', 'प्रेम–पथिक', 'कानन कुसुम' उनके प्रमुख काव्य हैं। उन्होंने 'चंद्रगुप्त', 'स्कंदगुप्त' और 'अजातशत्रु' नाटक लिखे हैं। उपंयास 'कंकाल', 'तितली', 'इरावती' के अतिरिक्त कहानी संग्रह के रूप में 'आँधी', 'प्रतिध्वनि', 'आकाशदीप' और 'देवरथ' की भी इन्होंने रचना की है।

महाकाव्य कामायनी के कारण इन्हें बहुत प्रसिद्धि मिली। हिन्दी साहित्य जगत इनका सदैव ऋणी रहेगा।

आर्द्रा नक्षत्र; आकाश में काले–काले बादलों की घुमड़, जिसमें देव–दुंदुभि का गंभीर घोष। प्राची के एक निरभ्र कोने से स्वर्ण पुरुष झाँकने लगा था, दिखने लगी महाराज की सवारी। शैलमाला के अंचल में समतल उर्वरा भूमि से सोंधी बास उठ रही थी। नगर–तोरण से जयघोष हुआ, भीड़ में गजराज का चामरधारी शुण्ड उन्नत दिखाई पड़ा। हर्ष और उत्साह का समुद्र हिलोर भरता हुआ आगे बढ़ने लगा।

प्रभात की हेम किरणों से अनुरंजित नन्हीं नन्हीं बूँदों का एक झोंका स्वर्ण मल्लिका के समान बरस पड़ा। मंगल सूचना से जनता ने हर्ष ध्वनि की।

रथों, हाथियों और अश्वारोहियों की पंक्ति थी। दर्शकों की भीड़ भी कम न थी। गजराज बैठ गया, सीढ़ियों से महाराज उतरे। सौभाग्यवती और कुमारी सुंदरियों के दो दल, आम्रपल्लवों से सुशोभित मंगल कलश और फूल, कुंकुम तथा खीलों से भरे थाल लिए, मधुर गान करते हुए आगे बढ़े।

महाराज के मुख पर मधुर मुस्कान थी। पुरोहित वर्ग ने स्वस्त्ययन किया। स्वर्ण रंजित हल की मूठ पकड़कर महाराज ने जुते हुए सुन्दर पुष्ट बैलों को चलने का संकेत किया। बाजे बजने लगे। किशोरी कुमारियों ने खीलों और फूलों की वर्षा की।

कोशल का यह उत्सव प्रसिद्ध था। एक दिन के लिए महाराज को कृषक बनना पड़ता। उस दिन इन्द्र पूजन की धूम–धाम होती; गोठ होती। नगर–निवासी उस पहाड़ी भूमि में आनंद मनाते। प्रतिवर्ष कृषि का यह महोत्सव उत्साह से सम्पन्न होता; दूसरे राज्यों से भी युवक राजकुमार इस उत्सव में बड़े चाव से आकर योग देते।

मगध का एक राजकुमार अरुण अपने रथ पर बैठा बड़े कुतूहल से यह दृश्य देख रहा था। बीजों का एक थाल लिए कुमारी मधुलिका महाराज के साथ थी। बीज बोते हुए महाराज जब हाथ बढ़ाते, तब मधुलिका उनके सामने थाल कर देती। यह खेत मधुलिका का था, जो इस साल महाराज की खेती के लिए चुना गया था; इसलिए बीज देने का सम्मान मधुलिका को ही मिला। वह कुमारी थी, सुंदरी थी। कौशेय वसन उसके शरीर पर इधर–उधर लहराता हुआ स्वयं शोभित हो रहा था। वह कभी उसे सँभालती और कभी अपनी रूखी अलकों को। कृषक बालिका के शुभ्र भाल पर श्रमकणों की भी कमी न थी, वे सब बरौनियों में गुँथे जा रहे थे किन्तु महाराज को बीज देने में उसने शिथिलता नहीं की। सब लोग महाराज का हल चलाना देख रहे थे– विस्मय से, कुतुहल से। और अरुण देख रहा था कृषक कुमारी मधुलिका को। आह! कितना भोला सौंदर्य! कितनी सरल चितवन!

उत्सव का प्रधान कृत्य समाप्त हो गया। महाराज ने मधुलिका के खेत को पुरस्कृत किया, थाल में कुछ स्वर्णमुद्राएँ। वह राजकीय अनुग्रह था। मधुलिका ने थाली सिर से लगा ली; किन्तु साथ ही उन स्वर्णमुद्राओं को महाराज पर न्यौछावर करके बिखेर दिया। मधुलिका की उस समय की ऊर्जस्वित मूर्ति लोग आश्चर्य से देखने लगे! महाराज की भृकुटी भी जरा चढ़ी थी कि मधुलिका ने सविनय कहा– ''देव ! यह मेरे पितृ पितामहों की भूमि है। इसे बेचना अपराध है इसलिए मूल्य स्वीकार करना मेरी सामर्थ्य के बाहर है।'' महाराज के बोलने के पहले ही वृद्ध मंत्री ने तीखे स्वर से कहा – ''अबोध ! क्या बक रही है? राजकीय अनुग्रह का तिरस्कार! तेरी भूमि से चौगुना मूल्य है; फिर कोशल का तो यह सुनिश्चित राष्ट्रीय नियम है। तू आज से राजकीय रक्षण पाने की अधिकारिणी हुई, इस धन से अपने को सुखी बना।''

''राजकीय रक्षण की अधिकारिणी तो सारी प्रजा है मंत्रिवर! महाराज को भूमि समर्पण करने में तो मेरा कोई विरोध न था और न है; किन्तु मूल्य स्वीकार करना असम्भव है''– मधुलिका उत्तेजित हो उठी थी।

महाराज के संकेत करने पर मंत्री ने कहा '' देव! वाराणसी युद्ध के अन्यतम वीर सिंहमित्र की एक मात्र कन्या है।'' महाराज चौंक उठे– ''सिंह मित्र की कन्या! जिसने मगध के सामने कोशल की लाज रख ली थी, उसी वीर की मधुलिका कन्या है ?''

''हाँ, देव!'' मंत्री ने सविनय कहा।

''इस उत्सव के परंपरागत नियम क्या हैं, मंत्रिवर?''– महाराज ने पूछा।

''देव! नियम तो बहुत साधारण हैं। किसी भी अच्छी भूमि को इस उत्सव के लिए चुनकर नियमानुसार पुरस्कार स्वरूप उसका मूल्य दे दिया जाता है। वह भी अत्यंत अनुग्रहपूर्वक अर्थात् भू–संपत्ति का चौगुना मूल्य उसे मिलता है। उस खेती को वही व्यक्ति वर्ष भर देखता है। वह राजा का खेत कहा जाता है।''

महाराज को विचार संघर्ष से विश्राम की अत्यंत आवश्यकता थी। महाराज चुप रहे। जयघोष के साथ सभा विसर्जित हुई। सब अपने–अपने शिविरों मे ंचले गए, किन्तु मधुलिका को उत्सव में फिर किसी ने न देखा। वह अपने खेत की सीमा पर विशाल मधूक–वृक्ष के चिकने हरे पत्तों की छाया में अनमनी चुपचाप बैठी रही।

000

रात्रि का उत्सव अब विश्राम ले रहा था। राजकुमार अरुण उसमें सम्मिलित नहीं हुआ। वह अपने विश्राम भवन में जागरण कर रहा था, आँखों में नींद न थी। प्राची में जैसी गुलाली खिल रही थी, वही रंग उसकी आँखों में था। सामने देखा तो मुँडेर पर कपोती एक पैर पर खड़ी पंख फैलाए अँगड़ाई ले रही थी। अरुण उठ खड़ा हुआ। द्वार पर सुसज्जित अश्व था। वह देखते–देखते नगरतोरण पर जा पहुँचा। रक्षक गण ऊँघ रहे थे, अश्व के पैरों के शब्द से चौंक उठे।

युवक कुमार तीर सा निकल गया। सिंधु देश का तुरंग प्रभात के पवन से पुलकित हो रहा था। घूमता–घूमता अरुण उसी मधूक वृक्ष के नीचे पहुँचा, जहाँ मधुलिका अपने हाथ पर सिर धरे हुए खिन्न निद्रा का सुख ले रही थी।

अरुण ने देखा, एक छिन्न माधवी लता वृक्ष की शाखा से च्युत् होकर पड़ी है। सुमन मुकुलित, भ्रमर निस्पंद थे। अरुण ने अपने अश्व को मौन रहने का संकेत किया, उस सुषमा को देखने के लिए; परंतु कोकिल बोल उठी। जैसे उसने अरुण से प्रश्न किया– छि! कुमारी के सोए हुए सौंदर्य पर दृष्टिपात करने वाले धृष्ट, तुम कौन? मधुलिका की आँखे खुल पड़ीं। उसने देखा, एक अपरिचित युवक। वह संकोच से उठ बैठी। ''भद्रे ! तुम्हीं न कल के उत्सव की संचालिका रही हो ?''

''उत्सव ! हाँ, उत्सव ही तो था।''

''कल उस सम्मान .....''

''क्यों आपको कल का स्वप्न सता रहा है? भद्र! आप क्या मुझे इस अवस्था में संतुष्ट न रहने देंगे?''

''मेरा हृदय तुम्हारी उस छवि का भक्त बन गया है, देवि।''

''मेरे उस अभिनय का, मेरी विडंबना का। आह! मनुष्य कितना निर्दय है, अपरिचित! क्षमा करो, जाओ अपने मार्ग।''

''सरलता की देवी! मैं मगध का राजकुमार, तुम्हारे अनुग्रह का प्रार्थी हूँ, मेरे हृदय की भावना अवगुंठन में रहना नहीं जानती। उसे अपनी .....।''

''राजकुमार! मैं कृषक बालिका हूँ। आप नंदनबिहारी और मैं पृथ्वी पर परिश्रम करके जीनेवाली। आज मेरी स्नेह की भूमि पर से मेरा अधिकार छीन लिया गया है। मैं दुःख से विकल हूँ; मेरा उपहास न करो।''

''मै कौशल नरेश से तुम्हारी भूमि तुम्हें दिलवा दूँगा।''

''नहीं, वह कोशल का राष्ट्रीय नियम है। मैं उसे बदलना नहीं चाहती, चाहे उससे मुझे कितना ही दुःख हो।''

''तब तुम्हारा रहस्य क्या है?''

''यह रहस्य मानव हृदय का है, मेरा नहीं। राजकुमार, नियमों से यदि मानव हृदय बाध्य होता, तो आज मगध के राजकुमार का हृदय किसी राजकुमारी की ओर न खिंचकर एक कृषक बालिका का अपमान करने न आता।'' मधुलिका उठ खड़ी हुई।

चोट खाकर राजकुमार लौट पड़ा। किशोर किरणों में उसका रत्नकिरीट चमक उठा। अश्व वेग से चला जा रहा था और मधुलिका निष्ठुर प्रहार करके क्या स्वयं आहत न हुई ? उसके हृदय में टीस सी होने लगी। वह सजल नेत्रों से उड़ती हुई धूल देखने लगी।

000

मधुलिका ने राजा का प्रतिपादन, अनुग्रह नहीं लिया। वह दूसरे खेतों में काम करती और चौथे पहर रूखी–सूखी खाकर पड़ी रहती। मधूक वृक्ष के नीचे छोटी–सी पर्णकुटीर थी। सूखे डंठलों से उसकी दीवार बनी थी। मधुलिका का वही आश्रम था। कठोर परिश्रम से जो रूखा–सूखा अन्न मिलता, वही उसकी साँसों को बढ़ाने के लिए पर्याप्त था।

दुबली होने पर भी उसके अंग पर तपस्या की कांति थी। आसपास के कृषक उसका आदर करते। वह एक आदर्श बालिका थी। दिन, सप्ताह, महीने और वर्ष बीतने लगे।

000

शीतकाल की रजनी, मेघों से भरा आकाश, जिसमें बिजली की दौड़–धूप। मधुलिका का छाजन टपक रहा था। ओढ़ने की कमी थी। वह ठिठुरकर एक कोने में बैठी थी। मधुलिका अपने अभाव को आज बढ़ाकर सोच रही थी। जीवन से सामंजस्य बनाए रखनेवाले उपकरण तो अपनी सीमा निर्धारित रखते हैं; परन्तु उनकी आवश्यकता और कल्पना भावना के साथ बढ़ती–घटती रहती है। आज बहुत दिनों बाद उसे बीती हुई बात स्मरण हुई–दो, नहीं–नहीं तीन वर्ष हुए होंगे, इसी मधूक के नीचे प्रभात में, तरुण राजकुमार ने क्या कहा था?

वह अपने हृदय से पूछने लगी – उन चाटुकारी शब्दों को सुनने के लिए उत्सुक–सी वह पूछने लगी–क्या कहा था? दुखदग्ध हृदय उन स्वप्न सी बातों को स्मरण रख सकता था! और स्मरण ही होता, तो भी कष्टों की इस काली निशा में वह कहने का साहस करता? हाय री विडंबना!

आज मधुलिका उस बीते हुए क्षण को लौटा लेने के लिए विकल थी। दारिद्रय की ठोकरों ने उसे व्यथित और अधीर कर दिया है। मगध की प्रासाद– माला के वैभव का काल्पनिक चित्र–उन सूखे डंठलों के रंध्रों से, नभ में बिजली के आलोक में नाचता हुआ दिखाई देने लगा। खिलाड़ी शिशु जैसे – श्रावण की संध्या में जुगनू को पकड़ने के लिए हाथ लपकता है, वैसे ही मधुलिका मन ही मन कह रही थी। अभी वह निकल गया। ''वर्षा ने भीषण रूप धारण किया। गड़बड़ाहट बढ़ने लगी, ओले पड़ने की संभावना मधुलिका अपनी जर्जर झोपड़ी के लिए काँप उठी। सहसा बाहर कुछ शब्द हुआ–

''कौन है यहाँ? पथिक को आश्रय चाहिए।''

मधुलिका ने डंठलों का कपाट खोल दिया। बिजली चमक उठी। उसने देखा, एक पुरुष घोड़े की डोर पकड़े खड़ा है। सहसा वह चिल्ला उठी – 'राजकुमार!'

'मधुलिका?' – आश्चर्य से युवक ने कहा।

एक क्षण के लिए सन्नाटा छा गया। मधुलिका अपनी कल्पना को सहसा प्रत्यक्ष देखकर चकित हो गई– ''इतने दिनों के बाद आज फिर!''

अरुण ने कहा –''कितना समझाया मैंने –परन्तु.....''

मधुलिका अपनी दयनीय अवस्था पर संकेत करने देना नहीं चाहती थी। उसने कहा– ''और आज आपकी यह क्या दशा है?''

सिर झुकाकर अरुण ने कहा– ''मै, मगध का विद्रोही, निर्वासित, कोशल में जीविका खोजने आया हूँ।''

मधुलिका उस अंधकार में हँस पड़ी। मगध के विद्रोही राजकुमार का स्वागत करे एक अनाथिनी कृषक बालिका, यह भी एक विडंबना है, तो भी मैं स्वागत के लिए प्रस्तुत हूँ।''

000

शीतकाल की निस्तब्ध रजनी, कुहरे से चाँदनी, हाड़ कँपा देने वाला समीर, तो भी अरुण और मधुलिका पहाड़ी गह्वर के द्वार पर वटवृक्ष के नीचे बैठे हुए बातें कर रहे हैं। मधुलिका की वाणी में उत्साह था; किन्तु अरुण जैसे अत्यंत सावधान होकर बोलता।

मधुलिका ने पूछा–''जब तुम इतनी विपन्न अवस्था में हो तो फिर इतने सैनिकों को साथ रखने की क्या आवश्यकता है?''

''मधुलिका! बाहुबल ही तो वीरों की आजीविका है। ये मेरे जीवन–मरण के साथी हैं, भला मैं इन्हें कैसे छोड़ देता? और करता ही क्या?''

क्यों? हम लोग परिश्रम से कमाते और खाते हैं तो तुम .....।''

''भूल न करो; मैं अपने बाहुबल पर भरोसा करता हूँ। नए राज्य की स्थापना कर सकता हूँ, निराश क्यों हो जाऊँ? अरुण के शब्दों में कंपन था, वह जैसे कुछ कहना चाहता था, पर कह न सकता था।

''नवीन राज्य! ओहो! तुम्हारा उत्साह तो कम नहीं। भला कैसे? कोई ढंग बताओ तो मैं भी कल्पना का आनंद ले लूँ।

कल्पना का आनंद नहीं मधुलिका, मैं तुम्हें राजारानी के समान सिंहासन पर बिठाऊँगा! तुम अपने छिने हुए खेत की चिंता करके भयतीत हो।''

एक क्षण में सरल मधुलिका के मन में प्रमाद का अंधड़ बहने लगा, द्वंद्व मच गया। उसने सहसा कहा– ''आह मैं सचमुच आज तक तुम्हारी प्रतीक्षा करती थी, राजकुमार!''

अरुण ढिठाई से उसके हाथों को दबाकर बोला– ''तो मेरा भ्रम था, तुम सचमुच मुझे प्यार करती हो?''

युवती का वक्षस्थल फूल उठा, वह हाँ भी नहीं कह सकी, ना भी नहीं। अरुण ने उसकी अवस्था का अनुभव कर लिया। कुशल मनुष्य के समान उसके अवसर को हाथ से न जाने दिया। तुरंत बोल उठा– तुम्हारी इच्छा हो

तो प्राणों से पण लगाकर मैं तुम्हें इस कोशल सिंहासन पर बिठा दूँ। मधुलिके। अरुण के खड्ग का आतंक देखोगी?'' ''मधुलिका एक बार काँप उठी। वह कहना चाहती थी– नहीं; किन्तु उसके मुँह से निकला–''क्या?''

''सत्य मधुलिका, कोशल नरेश तभी से तुम्हारे लिए चिंतित हैं। यह मैं जानता हूँ, तुम्हारी साधारण–सी प्रार्थना वे अस्वीकार न करेंगे। और मुझे यह भी विदित है कि कोशल के सेनापति अधिकांश सैनिकों के साथ पहाड़ी दस्युओं का दमन करने के लिए बहुत दूर चले गए हैं।''

मधुलिका की आँखों के आगे बिजलियाँ हँसने लगीं। दारुण भावना से उसका मस्तक झंकृत हो उठा। अरुण ने कहा, ''तुम बोलती नहीं हो?''

''जो कहोगे वह करूँगी ।'' मंत्रमुग्ध–सी मधुलिका ने कहा।

000

स्वर्णमंच पर कोशल नरेश अर्द्धनिद्रित अवस्था में आँखें मुकुलित किए हैं। एक चामरधारिणी युवती पीछे खड़ी अपनी कलाई बड़ी कुशलता से घुमा रही है। चामर के शुभ्र आंदोलन उस कोष्ठ में धीरे–धीरे संचालित हो रहे हैं। तांबूल वाहिनी प्रतिमा के समान दूर खड़ी है।

प्रतिहारी ने आकर कहा– ''जय हो देव! एक स्त्री कुछ प्रार्थना करने आई है।''

आँखें खोलते हुए महाराज ने कहा–''स्त्री ! प्रार्थना करने आई है ? आने दो।''

प्रतिहारी के साथ मधुलिका आई। उसने प्रणाम किया। महाराज ने स्थिर दृष्टि से उसकी ओर देखा और कहा – 'तुम्हें कहीं देखा है?'

''तीन बरस हुए देव! मेरी भूमि खेती के लिए ली गई थी।''

''ओह! तो तुमने इतने दिन कष्ट में बिताए, आज उसका मूल्य माँगने आई हो, क्यों?

अच्छा–अच्छा तुम्हें मिलेगा। प्रतिहारी!''

''नहीं महाराज, मुझे मूल्य नहीं चाहिए।''

''मूर्ख! फिर क्या चाहिए?''

''उतनी ही भूमि, दुर्ग के दक्षिणी नाले के समीप की जंगली भूमि, वहीं मैं अपनी खेती करुँगी। मुझे एक सहायक मिल गया है। वह मनुष्यों से मेरी सहायता करेगा, भूमि को समतल भी तो बनाना होगा।''

महाराज ने कहा– ''कृषक बालिके! वह बड़ी ऊबड़–खाबड़ भूमि है। तिस पर वह दुर्ग के समीप एक सैनिक महत्व रखती है।''

''तो फिर निराश लौट जाऊँ?''

''सिंहमित्र की कन्या! मैं क्या करूँ? तुम्हारी यह प्रार्थना .....''

''देव! जैसी आज्ञा हो!''

''जाओ, तुम श्रवजीवियों को उसमें लगाओ। मैं अमात्य को आज्ञापत्र देने का आदेश करता हूँ।'' '

जय हो देव! – कहकर प्रणाम करती हुई मधुलिका राज मंदिर के बाहर आई।

दुर्ग के दक्षिण, भयावने नाले के तट पर, घना जंगल है। आज मनुष्यों के पद संचार से शून्यता भंग हो रही थी। अरुण के छिपे हुए मनुष्य स्वतंत्रता से इधर–उधर घूमते थे। झाड़ियों को काटकर पथ बन रहा था। नगर दूर था, फिर उधर यों ही कोई नहीं आता था। फिर अब तो महाराज की आज्ञा से वहाँ मधुलिका का अच्छा–सा खेत बन रहा था। तब इधर की किसको चिंता होती?

एक घने कुंज में अरुण और मधुलिका एक–दूसरे को हर्षित नेत्रों से देख रहे थे। संध्या हो चली थी। उस निविड़ वन में उन नवागत मनुष्यों को देखकर पक्षीगण अपने नीड़ को लौटते हुए अधिक कोलाहल कर रहे थे।

प्रसन्नता से अरुण की आँखें चमक उठीं। सूर्य की अंतिम किरणें झुरमुट में घुसकर मधुलिका के कपोलों से खेलने लगीं। अरुण ने कहा–''चार प्रहर और विश्राम करो, प्रभात में ही इस जीर्ण कलेवर कोशल राष्ट्र की राजधानी श्रावस्ती में तुम्हारा अभिषेक होगा और मगध से निर्वासित मैं एक स्वतंत्र राष्ट्र का अधिपति बनूँगा मधुलिके!''

''भयानक! अरुण, तुम्हारा साहस देख मैं चकित हो रही हूँ। केवल सौ सैनिकों से तुम.....''

''रात के तीसरे प्रहर में मेरी विजय यात्रा होगी।''

''तो तुमको इस विजय पर विश्वास है?''

''अवश्य! तुम अपनी झोपड़ी में यह रात बिताओ; प्रभात से तो राज मंदिर ही तुम्हारी लीला निकेतन बनेगा।

मधुलिका प्रसन्न थी; किन्तु अरुण के लिए उसकी कल्याण कामना सशंक थी। वह कभी–कभी उद्विग्न–सी होकर बालकों के समान प्रश्न कर बैठती। अरुण उसका समाधान कर देता। सहसा कोई संकेत पाकर उसने कहा–''अच्छा अंधकार अधिक हो गया। अभी तुम्हें दूर जाना है और मुझे भी प्राणपण से इस अभियान के प्रारंभिक कार्यो को अर्धरात्रि तक पूरा कर लेना चाहिए; तब रात्रि भर के लिए विदा मधुलिके!''

मधुलिका उठ खड़ी हुई। कँटीली झाड़ियों से उलझती हुई क्रम से बढ़ने वाले अंधकार में वह झोपड़ी की ओर चली।

000

पथ अंधकारमय था और मधुलिका का हृदय भी निविड़तम से घिरा था। उसका मन सहसा विचलित हो उठा, मधुरता नष्ट हो गई। जितनी सुख–कल्पना थी, वह जैसे अंधकार में विलीन होने लगी। वह भयभीत थी, पहला भय उसे अरुण के लिए उत्पन्न हुआ, यदि वह सफल न हुआ तो? फिर सहसा सोचने लगी– वह क्यों सफल हो? श्रावस्ती दुर्ग एक विदेशी के अधिकार में क्यों चला जाए? मगध कोशल का चिर शत्रु! ओह उसकी विजय! कौशल नरेश ने क्या कहा था–'सिंहमित्र की कन्या।' सिंहमित्र, कोशल का रक्षक वीर, उसी की कन्या आज क्या करने जा रही है? नहीं,नहीं। 'मधुलिका! मधुलिका!' जैसे उसके पिता उस अंधकार में पुकार रहे थे। वह पगली की तरह चिल्ला उठी। रास्ता भूल गई।

एक रात पहर बीत चली, पर मधुलिका अपनी झोंपड़ी तक न पहुँची। वह उधेड़बुन में विक्षिप्त–सी चली जा रही थी। उसकी आँखों के सामने कभी सिंहमित्र और कभी अरुण की मूर्ति अंधकार में चित्रित होती जाती। उसे सामने आलोक दिखाई पड़ा। वह बीच पथ से खड़ी हो गई। प्रायः एक सौ उल्काधारी अश्वारोही चले आ रहे थे और आगे–आगे एक वीर अधेड़ सैनिक था। उसके बाएँ हाथ में अश्व की वल्गा और दाहिने हाथ में नग्न खड्ग। अत्यंत धीरता से वह टुकड़ी अपने पथ में चल रही थी परन्तु मधुलिका बीच पथ से हिली नहीं। प्रमुख सैनिक पास आ गया; पर मधुलिका अब भी नहीं हटी। सैनिक ने अश्व रोककर कहा। –''कौन? कोई उत्तर नहीं मिला। तब तक दूसरे अश्वरोही ने कड़ककर कहा''तू कौन है स्त्री?'' कोशल के सेनापति को उत्तर शीघ्र दे।''

रमणी जैसे विकार ग्रस्त स्वर में चिल्ला उठी –''बाँध लो मुझे। मेरी हत्या करो। मैंने अपराध ही ऐसा किया है।''

सेनापति हँस पड़े, बोले–''पगली है।''

''पगली नहीं, यदि पगली होती, तो इतनी विचार वेदना क्यों होती? सेनापति, मुझे बाँध लो। राजा के पास ले चलो।''

''क्या है, स्पष्ट कह!''

''श्रावस्ती का दुर्ग एक प्रहर में दस्युओं के हस्तगत हो जाएगा। दक्षिणी नाले के पार उनका आक्रमण होगा।'' सेनापति चौंक उठे। उन्होनें आश्चर्य से पूछा–''तू क्या कह रही है?'' ''मैं सत्य कह रही हूँ; शीघ्रता करो।''

सेनापति ने अस्सी सैनिकों को नाले की ओर धीरे–धीरे बढ़ने की आज्ञा दी और स्वयं बीच अश्वारोहियों के साथ दुर्ग की ओर बढ़े। मधुलिका एक अश्वारोही के साथ बाँध दी गई।

000

श्रावस्ती का दुर्ग, कोशल राष्ट्र का केन्द्र, इस रात्रि में अपने विगत वैभव का स्वप्न देख रहा था। भिन्न राजवंशों ने उसके प्रांतों पर अधिकार जमा लिया है। अब वह केवल कई गाँवों का अधिपति है फिर भी उसके साथ कोशल के अतीत की स्वर्ण गाथाएँ लिपटी हैं। वही लोगों की ईर्ष्या का कारण है। जब थोड़े से अश्वारोही बड़े वेग से आते हुए दुर्ग द्वार पर रुके तब दुर्ग के प्रहरी चौंक उठे। उल्का के आलोक में उन्होनें सेनापति को पहचाना, द्वार खुला। सेनापति घोड़े की पीठ से उतरे। उन्होनें कहा–''अग्निसेन! दुर्ग में कितने सैनिक होंगे?''

''सेनापति की जय हो! दो सौ।''

उन्हें शीघ्र ही एकत्र करो; परंतु बिना किसी शब्द के। सौ को लेकर तुम शीघ्र ही चुपचाप दुर्ग के दक्षिण की ओर चलो। आलोक और शब्द न हो।

सेनापति ने मधुलिका की ओर देखा। वह खोल दी गई। उसे अपने पीछे आने का संकेत कर सेनापति राज मंदिर की ओर बढ़े। प्रतिहारी ने सेनापति को देखते ही महाराज को सावधान किया। वह अपनी सुख निद्रा के लिए प्रस्तुत हो रहे थे; किन्तु सेनापति और साथ ही मधुलिका को देखते ही चंचल हो उठे। सेनापति ने कहा ''जय हो देव! इस स्त्री के कारण मुझे इस समय उपस्थित होना पड़ा है।''

महाराज ने स्थिर नेत्रों से देखकर कहा –''सिंहमित्र की कन्या फिर यहाँ क्यों? क्या तुम्हारा क्षेत्र नहीं बन रहा है? कोई बाधा? सेनापति! मैंने दुर्ग के दक्षिणी नाले के समीप की भूमि इसे दी है। क्या उसी संबंध में तुम कहना चाहते हो?''

''देव! किसी गुप्त शत्रु ने उसी ओर से आज की रात में दुर्ग पर अधिकार कर लेने का प्रबंध किया है और इसी स्त्री ने मुझे पथ में यह संदेश दिया है।''

राजा ने मधुलिका की ओर देखा। वह काँप उठी। घृणा और लज्जा से वह गड़ी जा रही थी। राजा ने पूछा–''मधुलिका, यह सत्य है?''

''हाँ देव!''

राजा ने सेनापति से कहा–''सैनिकों को एकत्र करके तुम चलो, मैं अभी आता हूँ।'' सेनापति के चले जाने पर राजा ने कहा–''सिंहमित्र की कन्या! तुमने एक बार फिर कोशल का उपकार किया। यह सूचना देकर तुमने पुरस्कार का काम किया है। अच्छा, तुम यहीं ठहरो। पहले उन आततायियों का प्रबंध कर लूँ।

अपने साहसिक अभियान में अरुण बंदी हुआ और दुर्ग उल्का के आलोक में अतिरंजित हो गया। भीड़ ने जयघोष किया। सबके मन में उल्लास था। श्रावस्ती दुर्ग आज एक दस्यु के हाथ में जाने से बचा। आबाल वृद्ध, नारी आनंद से उन्मत्त हो उठे।

उषा के आलोक में सभा मण्डप दर्शकों से भर गया। बन्दी अरुण को देखते ही जनता ने रोष से हुंकार करते हुए कहा –''वध करो!'' राजा ने सबसे सहमत होकर आज्ञा दी। ''प्राणदंड!'' मधुलिका बुलाई गई। वह पगली–सी आकर खड़ी हो गई। कोशल नरेश ने पूछा–''मधुलिका, तुझे जो पुरस्कार लेना हो, माँग।'' वह चुप रही।

राजा ने कहा– ''मेरी निज में जितनी खेती है, मैं सब तुझे देता हूँ।'' मधुलिका ने एक बार बंदी अरुण की ओर देखा। उसने कहा–''मुझे कुछ न चाहिए। अरुण हँस पड़ा। राजा ने कहा–''नहीं मैं तुझे अवश्य दूँगा। माँग ले।''

''तो मुझे भी प्राणदंड मिले।'' कहती हुई वह बंदी अरुण के पास जा खड़ी हुई।

शब्दार्थ

निरभ्र–बादलों से रहित, **उर्वरा भूमि**–उपजाऊ भूमि, **हेम–**स्वर्ण, **अनुरंजित**–रँगा हुआ, **कौशेय**–गेरुवा, **ऊर्जस्वित** –ऊर्जा से भरी हुई, **अनुग्रह**–कृपा, **तुरंग**–घोड़ा, **दस्यु**–डाकू, **निविड़**–घना, **विक्षिप्त**–पागल, **आलोक–**प्रकाश, **उपकार**–भलाई, **उल्का–**मशाल, तारा, **आततायी**–अत्याचारी, **स्वस्त्ययन–** कल्याणार्थ मंगल कामना ।

अभ्यास

पाठ से

1. कोशल में आयोजित होने वाले उत्सव के परंपरागत नियम क्या थे?
2. मधुलिका ने अपनी भूमि के बदले मिलने वाली राजकीय अनुग्रह को अस्वीकार कर किस प्रकार के जीवन निर्वाह को चुना और क्यों?
3. दुर्ग पर अरुण के गुप्त आक्रमण की सूचना सेनापति को देकर मधुलिका ने अपने प्रेम के प्रति विश्वासघात का कार्य किया अथवा उत्कृष्ट नागरिकता का परिचय दिया? उपयुक्त उदाहरण देकर अपने मत का समर्थन कीजिए।
4. मधुलिका ने पुरस्कार के रूप में राजा से प्राणदंड क्यों माँगा एवं स्वयं बंदी अरुण के पास क्यों जा खड़ी हुई?
5. ''पुरस्कार कहानी प्रेम और संघर्ष का अनूठा उदाहरण है।'' इस कथन के पक्ष में अपने विचार दीजिए।
6. भाव स्पष्ट कीजिए :–
   (क) ''मधुलिका की आँखों के आगे बिजलियाँ हँसने लगीं, दारुण भावना से उसका मस्तिष्क झंकृत हो उठा।''
   (ख) ''जीवन में सामंजस्य बनाए रखने वाले उपकरण तो अपनी सीमा निर्धारित रखते हैं परन्तु उनकी आवश्यकता और कल्पना, भावना के साथ बढ़ती–घटती रहती है।''
   (ग) उपरोक्त कथन को एक उदाहरण के माध्यम से भी स्पष्ट कीजिए।

पाठ से आगे

F5858I

1. सभा विसर्जन के बाद मधुलिका सबकी दृष्टि से ओझल हो गई। उस समय उसकी मनःस्थिति कैसी रही होगी? सोचकर लिखिए।
2. पुरस्कार नामक इस कहानी का नाट्य–रूपान्तर कर कक्षा में मंचन कीजिए।
3. 'कोशल का कृषि महोत्सव भारतीय जन–जीवन में श्रम की स्थापना करता है।' इस कथन के आधार पर भारत की सामाजिक व्यवस्था में श्रम के महत्व का प्रतिपादन कीजिए।
4. ''मधुलिका की आँखों के सामने कभी सिंहमित्र और कभी अरुण की मूर्ति अंधकार में चित्रित होती जाती।'' उसकी यह स्थिति उसके मानसिक द्वंद्व को दर्शाती है। यह द्वंद्व आपको किस प्रकार प्रभावित करता है?

भाषा के बारे में

1. 'पुरस्कार' नामक यह पाठ गद्य की विधा कहानी के अंतर्गत आता है। कथावस्तु, चरित्र–चित्रण अथवा पात्र, कथोपथन, देशकाल अथवा वातावरण, उद्देश्य, शैली शिल्प ये कहानी के अनिवार्य तत्व होते हैं। इस कहानी में ये तत्व किस रूप में आए हैं? उदाहरण देकर इस पाठ के कहानी होने की सार्थकता सिद्ध कीजिए।

2. जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रतिनिधि कवि हैं। उन्हें मूलतः प्रेम का कवि माना जाता है। मानवता और मानवीय भावनाओं का चित्रण उन्होंने अनेक स्थलों पर किया है। उनकी रचनाओं में तत्सम शब्दों की बहुलता देखी जा सकती है। प्रतीकात्मकता तथा बिम्ब विधान उनकी शैली की प्रमुख विशेषताएँ हैं। छोटे–छोटे वाक्यों में गम्भीर भाव भरना, उसमें संगीत और लय का विधान करना उनकी शैली को सरस, स्वाभाविक, प्रवाहपूर्ण, ओजमयी और चुटीली बनाता है। पाठ के आधार पर प्रसाद जी की भाषा–शैली की उक्त विशेषताओं को कहानी में आए अंशों का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए रेखांकित कीजिए।

3. वह शब्द जिसे संस्कृत भाषा से लेकर हिन्दी में ज्यों का त्यों प्रयुक्त किया जाता है, तत्सम शब्द कहलाता है:– उदाहरण प्रहर, स्वर्ण, कृषक इस पाठ में इन शब्दों का बहुलता से प्रयोग हुआ है। इन्हें ढूँढ़िए और शिक्षक की मदद से उनके तद्भव रूप को लिखिए।

योग्यता विस्तार

1. इस कहानी में जिस प्रकार कोशल के उत्सव का उल्लेख हुआ है उसी प्रकार आपके अंचल/प्रदेश में भी कोई उत्सव प्रचलित होगा। घर के बड़े–बुजुर्गों से जानकारी प्राप्त कर उसका लेखन कीजिए।

2. 'पुरस्कार' नामक इस कहानी में बहुत सारे ऐतिहासिक स्थलों के नाम आए हैं। भारत के नक्शे में इनका विस्तार कहाँ से कहाँ तक था एवं वर्तमान में इन्हें किन नामों से जाना जाता है? पता लगाइए और लिखिए।

3. पाठ में 'चार प्रहर' शब्द का उल्लेख आया है–

   (क) प्राचीन काल में एक दिन में चौबीस घंटे को आठ हिस्सों में बाँटा गया था, जिसे हम समय की इकाई 'प्रहर' के नाम से जानते हैं। अपने शिक्षक की मदद से उक्त आठों प्रहरों के नाम एवं उनके समय विषयक जानकारी एकत्र करके लिखिए।

   (ख) संगीत में भी इन प्रहरों के आधार पर अलग–अलग रागों के गायन का विधान है, उन्हें भी जानिए।